पवित्र आत्मा कौन है?

अति महत्वपूर्ण प्रश्न

आर.सी. स्प्रोल

पवित्र आत्मा कौन है?

अति महत्वपूर्ण प्रश्नों की पुस्तिकाएँ निश्चित् मसीही सच्चाइयों के विषय में एक सहज परिचय प्रदान करती हैं। इस बढ़ते हुए संग्रह में निम्न शीर्षक सम्मिलित हैं:

यीशु कौन है?

क्या मैं बाइबल पर भरोसा कर सकता हूँ?

क्या प्रार्थना बातों को बदलती है?

क्या मैं परमेश्वर की इच्छा को जान सकता हूँ?

मुझे इस संसार में कैसे जीना चाहिए?

नया जन्म होने का अर्थ क्या है?

क्या मुझे निश्चय हो सकता है कि मैं बचा हुआ हूँ?

विश्वास क्या है?

मैं अपने दोषबोध के साथ क्या कर सकता हूँ?

त्रिएकता क्या है?

शेष श्रृंखला को देखने के लिए,
कृपया जाएँ: *https://margsatyajeevan.com*

अप्र

पवित्र आत्मा कौन है?

आर.सी. स्प्रोल

forthetruth.in

Who Is the Holy Spirit?
© 2012 by R.C. Sproul

Originally published by Ligonier Ministries
421 Ligonier Court, Sanford, FL 32771
Ligonier.org

All rights reserved. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system, or transmitted in any form or by any means—electronic, mechanical, photocopy, recording, or otherwise—without the prior written permission of the publisher, Ligonier Ministries. The only exception is brief quotations in published reviews.

Cover design: Ligonier Creative
Interior typeset: Katherine Lloyd, The DESK

First Hindi Translation and Print 2023
This Hindi edition is issued in arrangement with Ligonier Ministries, USA.
Translated and published by 'For The Truth Press Pvt. Ltd.'
For sales and distribution in India, and not for export therefrom.

Hindi ISBN: 978-81-960303-8-4 (Paperback)
Hindi ISBN: 978-81-960303-4-6 (eBook)

For the Truth is a publishing company which exists to print, publish & distributes resources for the Church in India.

प्रथम हिन्दी अनुवाद एवं संस्करण 2023
यह हिन्दी संस्करण लिग्निएर मिनिस्ट्रीज़, के प्रायोजन से 'फॉर द ट्रूथ प्रेस प्राइवेट लिमिटेड' द्वारा अनुवादित एवं प्रकाशित किया गया है।

अधिक संसाधनों के लिए *मार्ग सत्य जीवन* की वेबसाइट पर जाएँ:
https://margsatyajeevan.com

विषय सूची

प्रस्तावना 1

एक तृतीय व्यक्ति 5

दो जीवन दाता 15

तीन अधिवक्ता (सहायक) 27

चार पवित्र बनाने वाला 35

पाँच अभिषेककर्ता 47

छः प्रदीपक 63

प्रस्तावना

जब मैं सितम्बर 1957 में मसीही बना, तो मैंने अपने आपको एक गम्भीर दुविधा में पाया। मेरा विवाह होने के लिए मेरी मंगनी हो चुकी थी, किन्तु जब मैंने अपनी मंगेतर को अपने हृदय-परिवर्तन *(conversion)* के विषय में बताया, तो उसने सोचा कि मैं पागल हो गया हूँ। यह बात तो व्याकुल करने के लिए पर्याप्त थी, किन्तु अब मैं यह भी जान गया था कि मुझे किसी अविश्वासी के साथ विवाह नहीं करना चाहिए और तब मैं इस सोच में पड़ गया कि क्या मैं उस स्त्री से विवाह कर पाऊँगा जिससे मैं प्रेम करता हूँ। इस दुविधा के किसी समाधान के बिना ही कई महीने बीत गये।

अन्ततः, बसन्त ऋतु की छुट्टियाँ आईं। मेरी मंगेतर जिस महाविद्यालय में पढ़ती थी वह वहाँ से पिट्सबर्ग अपने घर जाने की योजना बना रही थी, और मैंने उसे मनाया कि वह मेरे महाविद्यालय पर रुककर, मेरे साथ परिसर के एक बाइबल अध्ययन में उपस्थित हो और फिर लड़कियों के छात्रावास में एक रात्रि बिताए। मुझे कोई भी ऐसी अन्य बात स्मरण नहीं है जिसके लिए

मैंने प्रार्थना करने में इससे अधिक समय व्यतीत किया हो। मैंने उसके आने से पूर्व लगभग पूरा दिन अपने घुटनों पर यह प्रार्थना करते हुए बिताया कि परमेश्वर उसके जीवन में कार्य करे। मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यदि वह शीघ्र मसीही नहीं बनती है तो मुझे मंगनी को तोड़ना होगा, भले ही मैं ऐसा नहीं करना चाहता था।

हम उस रात्रि बाइबल अध्ययन में गये और वह उस अध्ययन में सम्पूर्ण समय बिना कोई शब्द कहे बैठी रही। तद्पश्चात्, मैं उसे लड़कियों के छात्रावास में ले गया, और वह अभी भी अत्यन्त शान्त थी। तथापि अगली सुबह जब मैं उससे मिलने के लिए गया, तो वह बाहर ऐसे आयी मानो कि बादलों पर चल रही हो। उसने मुझे बताया कि उसे सोने में कठिनाईं का आभास हुआ क्योंकि उस रात्रि से पहले उसके साथ कुछ घटित हुआ था। वह रात्रि में बार-बार निद्रा से जागती थी तथा अपने आपको कचोटती थी और फिर यह पूछती थी कि "क्या मेरे पास अभी भी वह है?" फिर प्रत्येक बार वह अपने को बताती थी "हाँ, मेरे पास अभी भी वह है," और फिर वह वापस सोने चली जाती थी। उस पूर्व रात्रि को पवित्रशास्त्रों के अध्ययन के द्वारा ख्रीष्ट की ओर उसका हृदय-परिवर्तन हुआ था।

मेरे लिए उस अद्भुत सुबह की एक सबसे स्पष्ट स्मृतियों में से एक क्षण वह है जब हम लोग अपनी गाड़ी में प्रवेश कर रहे थे। और जब वह मुझे अपने अनुभव के विषय में बता रही थी, तो उसने मेरी ओर बड़े उत्साह के साथ देखा

और कहा, "अब मैं जानती हूँ कि पवित्र आत्मा कौन है।" निःसन्देह, वर्षों से वह कलीसिया में उपस्थित रहती थी। उसने पवित्र आत्मा का वर्णन होते हुए सुना था। उसने परमेश्वर पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम को आशीष वचन में उद्घोषित होते हुए सुना था। परन्तु अब सबसे पहली बार उसे एक आभास हुआ था कि आत्मा वास्तव में कौन है।

मेरी मंगेतर का जो कि अब मेरी पत्नी है, वह कथन अत्यन्त महत्वपूर्ण था। ध्यान दीजिए कि उसने कहा, "अब मैं जानती हूँ कि पवित्र आत्मा *कौन* है," न कि, "अब मैं जानती हूँ कि पवित्र आत्मा *क्या* है।" अपने हृदय-परिवर्तन में, वह मसीहियत को एक अमूर्त भाव से हटाकर परमेश्वर के साथ एक व्यक्तिगत सम्बन्ध के रूप में समझने की ओर अग्रसर हुई। और सर्वप्रथम सत्यों में से एक जिसको उसने समझा था वह यह था कि पवित्र आत्मा एक व्यक्ति है, न कि कोई वस्तु।

यह अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि मसीही लोग जानें कि पवित्र आत्मा कौन है और उनके जीवनों में वह जिस अत्यावश्यक भूमिका को निभाता है उसके विषय में वे कुछ समझें। इसीलिए मैंने यह पुस्तिका लिखी है। निश्चित् ही, पवित्र आत्मा के विषय में बाइबलीय शिक्षा इतनी अधिक वृहद् है कि इस आकार की पुस्तिका में उससे उचित रीति से निहित नहीं किया जा सकता है। इस पुस्तिका में मेरा उद्देश्य केवल इस प्रश्न का सबसे अधारभूत उत्तर देना है कि आत्मा कौन है और फिर संक्षेप में उन महत्वपूर्ण भूमिकाओं को समझाना

है जिन्हें वह विश्वासियों के जीवन में निभाता है। इस विषय पर और विस्तार से अध्ययन करने के लिए मैं आपको उत्साहित करूँगा कि आप मेरी पुस्तक *पवित्र आत्मा का रहस्य (The Mystery of the Holy Spirit)* को पढ़ें।

मेरी प्रार्थना है कि आत्मा पर यह छोटी पुस्तिका आपको उस परमेश्वर अर्थात् पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के साथ एक गहरे सम्बन्ध में लाएगी जिससे आप प्रेम करते हैं और जिसकी आप सेवा करते हैं।

अध्याय एक

तृतीय व्यक्ति

The Third Person

मसीही होने के कारण, हम परमेश्वर के प्राणी *(being)* के विषय में एक ऐतिहासिक सूत्र को अंगीकार करते हैं। हम कहते हैं, "परमेश्वर सारतत्व *(essence)* में एक है और व्यक्ति *(person)* में तीन है।" दूसरे शब्दों में, परमेश्वर त्रिएक *(triune)* है; वह एक त्रिएकता *(Trinity)* है। इसका तात्पर्य यह है कि परमेश्वरत्व *(Godhead)* के भीतर तीन व्यक्ति हैं। इन व्यक्तियों को ईश्वरविज्ञान में भिन्न चरित्रों के रूप में समझा जाता है। इन तीनों, पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के मध्य में भिन्नताएँ, वास्तविक *(real)* भिन्नताएँ हैं किन्तु सारतात्विक *(essential)* भिन्नताएँ नहीं हैं। दूसरे शब्दों में, परमेश्वरत्व का एक ही सारतत्व है, तीन नहीं। मनुष्य होने के कारण हमारे

अनुभव के अनुसार, प्रत्येक जन जिससे हम भेंट करते हैं वह एक पृथक प्राणी है। एक व्यक्ति *(person)* का अर्थ एक प्राणी *(being)* है, और ऐसा ही इसके विपरीत भी है। परन्तु परमेश्वरत्व में एक प्राणी है, तीन व्यक्तियों के साथ। हमें इस भेद को बनाए रखना है अन्यथा हम एक प्रकार के बहुदेववाद *(polytheism)* में फँस जाएँगे। हम परमेश्वरत्व के तीन व्यक्तियों को ऐसे तीन प्राणियों के रूप में देखने लगेंगे जो कि तीन भिन्न ईश्वर हैं।

हम में से कोई भी त्रिएकता की गहराईयों को सम्पूर्णता से नहीं माप सकता है, परन्तु हम उसको और उत्तमता से समझने के लिए कुछ छोटे पगों को बढ़ा सकते हैं। यहाँ पर ये शब्द *अस्तित्व (existence)* और *निर्वाह (subsistence)* हमारी सहायता कर सकते हैं।

अस्तित्व *(Existence)* और निर्वाह *(Subsistence)*

एक खेल जो मैं अपने सेमिनरी के छात्रों के साथ खेलता था वह था उनसे यह प्रश्न पूछना कि, "क्या परमेश्वर अस्तित्व *(exist)* में है?" वे कहते थे, "अवश्य परमेश्वर अस्तित्व में है।" फिर मैं कहता था, "नहीं परमेश्वर अस्तित्व में नहीं है," और तब मुझे उनके मुखों पर प्रकट हुए वीभत्स भाव को देखने में सर्वदा आनन्द आता था जब वे यह विस्मय करने लगते थे कि कहीं उनके प्राध्यापक ने मसीहियत को त्याग तो नहीं दिया है तथा अपना विश्वास खो दिया है। परन्तु मैं तुरन्त ही उन पर दया खाते हुए उन्हें यह समझाता था कि जब मैं दृढ़तापूर्वक यह कह रहा था कि परमेश्वर अस्तित्व में नहीं है, तो मैं उनके साथ दर्शनशास्त्र का एक छोटा खेल खेल रहा था।

अस्तित्व (एगज़िस्ट-exist) शब्द लातीनी भाषा के *एकसिस्टारे*

(existare) से आता है, जिसका अर्थ है कि "उनमें से पृथक खड़े होना।" तो *एगज़िस्ट* शब्द का अक्षरशः अर्थ है कि "पृथक खड़े होना।" इसका तात्पर्य आवश्यक रीति से यह नहीं है कि यदि आप अस्तित्व में हैं तो जो कुछ आप करते हैं उसमें आप उत्कृष्ट हैं। स्पष्ट प्रश्न यह है कि एक प्राणी जो अस्तित्व में है वह किस अर्थ में पृथक खड़ा होता है?

अस्तित्व के विचार की जड़ें प्राचीन दर्शनशास्त्र में पायी जाती हैं, जब दर्शनशास्त्री प्राणी *(being)* के प्रश्न को लेकर अत्यन्त गम्भीर थे। हम भी इस प्रश्न के विषय में गम्भीर हैं; वास्तव में, जब हम परमेश्वर और स्वयं में भेद करते हैं तो हम उसको एक सर्वोच्च प्राणी *(Supreme Being)* के रूप में तथा स्वयं को मानव प्राणी *(human beings)* के रूप में पहचानते हैं। किन्तु, यह भेद थोड़ा सा भ्रमित करने वाला है। यह दोनों विवरण *प्राणी* शब्द का उपयोग करते हैं, इसलिए हम परमेश्वर और हमारे बीच में भिन्नता को देखने के लिए विशेषणात्मक विशेषक *(adjectival qualifiers)* की ओर देखते हैं: वह सर्वोच्च है और हम मानव हैं। यथार्थ में तो, परमेश्वर और मानव के बीच में मुख्य भेद तो स्वयं प्राणी का ही है। परमेश्वर विशुद्ध प्राणी है, एक ऐसा प्राणी जिसके पास स्वयं में ही अनन्तकाल से जीवन है। मानव प्राणी तो एक जीव है, एक ऐसा प्राणी जिसका क्षण प्रति क्षण का अस्तित्व सर्वोच्च प्राणी के अस्तित्व पर निर्भर करता है। परमेश्वर का प्राणी किसी बात पर निर्भर नहीं है और न ही किसी से व्युत्पन्न *(derived)* होता है। उसमें स्वयं ही में और स्वयं से अस्तित्व में होने की सामर्थ्य है।

जब प्राचीन दर्शनशास्त्री अस्तित्व के विषय में बात करते थे और वे लातीनी भाषा के शब्द का उपयोग करते थे जिसका अर्थ था "उनमें से पृथक खड़े होना," तो वे यह कह रहे थे कि अस्तित्व में होने का अर्थ है प्राणियों में

से पृथक होना। इसका अर्थ क्या है? उन दो वृतों *(circles)* की कल्पना कीजिए जो एक दूसरे को अतिच्छादित *(overlap)* नहीं करते हैं। पहला वृत "प्राणी" है और दूसरा "अ-प्राणी" *(non-being)* है, जो कि "कुछ भी नहीं" के लिए एक रोचक शब्द है। अब कल्पना कीजिए कि उन दो वृतों के बीच में एक टहनियों की आकृति अपने हाथों को फैलाए हुए है। एक हाथ उस वृत तक पहुँच रहा है जिसको "प्राणी" चिन्हित किया गया है और दूसरा उस वृत तक पहुँच रहा है जिसको "अ-प्राणी" चिन्हित किया गया है। यह मानवजाती का चित्रण है। हम प्राणी में भाग तो लेते हैं, किन्तु उसी समय में हम विनाश से केवल एक ही पग दूर रहते हैं। जीवित रहने का एकमात्र उपाय यह है कि हम उस वृत से अपना सम्बन्ध बनाए रखें जिसको कि "प्राणी" चिन्हित किया गया है, क्योंकि वह वृत तो उस एक जन को प्रदर्शित करता है जिसमें जैसा कि प्रेरित पौलुस कहता है कि, "हम उसी में जीवित रहते, चलते-फिरते और अस्तित्व (प्राणी) रखते हैं" (प्रेरितों के कार्य 17:28)—अर्थात्, परमेश्वर। और जबकि हम उस प्राणी में सहभागी होते हैं और उस प्राणी के द्वारा सम्भाले जाते हैं, हमें अ-प्राणी होने से एक पग दूर हटाया जाता है।

हमारी काल्पनिक टहनियों की आकृति उस बात का एक चित्र है जो कि दर्शनशास्त्रियों के मस्तिष्क में था जब वे प्राणी से पृथक खड़े होने की बात करते थे। हम कह सकते हैं कि मानव जाति "बनने" *(becoming)* की दशा में हैं। हम परिवर्तन से होकर जाते हैं। हम जो आज हैं, वह उस कल से जो हम थे तथा उस कल से जो हम होंगे, उससे भिन्न हैं। यह भले ही केवल इस तथ्य के अधार पर कि हम एक दिन से दूसरे दिन तक इन चौबीस घण्टों के समयकाल में अपनी आयु में वृद्धि करते हैं। यह परिवर्तन ही हमारे मानवपन का वह आयाम है जो कि हमारे अस्तित्व को परिभाषित करता है। परिवर्तन, उत्पन्न

होना, क्षय होना, वृद्धि और आयुवृद्धि यह सब हमारे जीवनों की विशेषताएँ हैं। किन्तु परमेश्वर सर्वदा सतत है। वह तो कल, आज और सदा एक सा है।

संक्षेप में, जब दर्शनशास्त्रियों ने अस्तित्व के विषय में बात की तब वे यह परिभाषित कर रहे थे कि जीव होने का अर्थ क्या है। तो इसलिए जब मैंने अपने सेमिनरी के छात्रों के साथ अपना छोटा सा खेल खेला, और जब मैंने यह दृढ़ कथन किया कि परमेश्वर अस्तित्व में नहीं है, तो मेरा यह अर्थ नहीं था कि कोई परमेश्वर नहीं है। मेरा तो मात्र यह अर्थ था कि परमेश्वर कोई जीव नहीं है। वह स्थान और समय से बाध्य नहीं है, परिवर्तन, उत्पन्न होने और क्षति के अधीन नहीं है। वह सर्वदा से और सनातन तक के लिए वही है जो वह है। वह है "मैं हूँ।"

जब हम परमेश्वरत्व के व्यक्तियों के विषय में बात करते हैं, तो हम सामान्यतः *अस्तित्व (existence)* शब्द का उपयोग नहीं करते है, किन्तु हम *निर्वाह (subsistence)* शब्द का उपयोग करते हैं। इन दोनों शब्दों में भेद क्या है? हम सामान्यतः *निर्वाह* शब्द का उपयोग अपने प्रतिदिन के बोलचाल में तब उपयोग करते हैं जब हम किसी के दरिद्रता में जीने के विषय में बात करते हैं। हम बात करते हैं निर्वाह योग्य आय की, जो कि थोड़ा सा वेतन है, या फिर एक निर्वाह योग्य भोजन, जो कि केवल आधारभूत पोषण तत्व ही प्रदान करता है। किन्तु ध्यान दीजिए कि इस शब्द में उपसर्ग *नि-sub* लगा है, जिसका अर्थ है "नीचे।" तो इसलिए निर्वाह *(subsistence)* वह अस्तित्व है जो कि किसी अन्य के नीचे होता है। यही विचार त्रिएकता की अवधारणा में निहित है। परमेश्वर तीन निर्वाहों के साथ, तीन भिन्न व्यक्तियों में एक प्राणी है। वे परमेश्वर के प्राणी *(being)* के अधीन निर्वाह करते हैं।

आत्मा का व्यक्तिगत स्वभाव

इस तथ्य को विभिन्न रीतियों से पवित्रशास्त्र में देखा गया है कि पवित्र आत्मा एक व्यक्ति है। इसके प्रमुख प्रमाणों में से एक यह है कि बाइबल बारम्बार और नियमित रीति से उसको सम्बोधित करने के लिए व्यक्तिगत सर्वनामों का उपयोग करती है। उसको *(पुल्लिंग)*, "वह," "उसका" और इत्यादि करके सम्बोधित किया गया है न कि "यह" *(नपुंसक लिंग)* करके सम्बोधित किया गया है। और साथ ही में वह उन कार्यों को करता है जिन्हें हम किसी व्यक्तित्व *(personality)* के साथ जोड़ते हैं। वह शिक्षा देता है, वह प्रेरित करता है, वह दिशा दिखाता है, वह अगुवाई करता है, वह दुखी होता है, वह हमें पापों से कायल करता है इत्यादि। अवैयक्तिक *(Impersonal)* वस्तुएँ इस रीति से व्यवहार नहीं करती हैं। केवल कोई व्यक्ति ही इन कार्यों को कर सकता है।

परन्तु पवित्रशास्त्र में पवित्र आत्मा मात्र एक व्यक्तिगत प्राणी के रूप में ही नहीं दिखाई देता है किन्तु पूर्णतः ईश्वरीय रूप में भी दिखाई देता है। हम इसे प्रेरितों के कार्य की पुस्तक से एक कौतुहल उत्पन्न करने वाली कहानी में देखते हैं:

> परन्तु हनन्याह नामक एक व्यक्ति ने और उसकी पत्नी सफीरा ने कुछ भूमि बेचकर, उसके मूल्य में से कुछ अपने लिए रख छोड़ा—उसकी पत्नी को तो इसकी पूर्ण जानकारी थी—तब उसका कुछ भाग लाकर हनन्याह ने प्रेरितों के चरणों पर रख दिया। परन्तु पतरस ने कहा, "हनन्याह, शैतान ने तेरे मन में यह बात क्यों डाली कि तू पवित्र आत्मा

> से झूठ बोले और भूमि के मूल्य में से कुछ बचाकर रख ले? जब कि वह बिकी न थी तो क्या तेरी न थी? और बिक जाने के बाद भी क्या वह तेरे ही अधिकार में न थी? तू ने अपने मन में ऐसा करने का विचार क्यों किया? तू ने मनुष्यों से नहीं, परन्तु परमेश्वर से झूठ बोला है।" (5:1-4)

हनन्याह और सफीरा का पाप यह था कि उन्होंने यह ढ़ोंग रचा कि कलीसिया के लिए उनका योगदान वास्तविक भेंट से अधिक बड़ा था। परमेश्वर के लिए जो वह भेंट चढ़ा रहे थे उसके विषय में उन्होंने झूठ बोला। मेरे विचार से पतरस इस बात के विपरीत कि वे कितने धन का योगदान कर रहे थे, उनके प्राणों की स्थिति के लिए अधिक चिन्तित था। किन्तु हनन्याह और सफीरा को प्राप्त हुई पतरस की फटकार के शब्दों पर ध्यान दें। उसने यह पूछने के द्वारा आरम्भ किया, "हनन्याह, शैतान ने तेरे मन में यह बात क्यों डाली कि तू पवित्र आत्मा से झूठ बोले?" परन्तु उसने इस बात को कहने के द्वारा समाप्त किया, "तू ने मनुष्यों से नहीं, परन्तु परमेश्वर से झूठ बोला है।" तो, जो झूठ हनन्याह ने पवित्र आत्मा से बोला था वह तो वास्तव में परमेश्वर से बोला था। इसका स्पष्ट तात्पर्य यह है कि पवित्र आत्मा परमेश्वर है।

परमेश्वर के गुण और कार्य

इसके अतिरिक्त, नया नियम प्रायः पवित्र आत्मा को ऐसे गुणों के साथ वर्णित करता है जो कि स्पष्टतः ईश्वरीय हैं। उदाहरण के लिए, पवित्र आत्मा सनातन है (इब्रानियों 9:14) और सर्वज्ञानी है (1 कुरिन्थियों 2:10–11)। यह दोनों

परमेश्वर के गुण हैं। साथ ही ये असंचारिये *(incommunicable)* गुण हैं, परमेश्वर के ऐसे गुण जिन्हें मनुष्य के द्वारा साझा नहीं किया जा सकता है।

हम पवित्रशास्त्र में देखते हैं कि आत्मा सृष्टि और छुटकारे के त्रिएकतावादी कार्यों में साझा होता है। उत्पत्ति 1 दर्शाता है कि पिता ने जगत को अस्तित्व में आने के लिए आज्ञा दी। नया नियम हमें बताता है कि जिस अभिकर्ता *(agent)* के द्वारा संसार को पिता अस्तित्व में लाया वह *लोगॉस (logos)* था, त्रिएकता का द्वितीय व्यक्ति, हमारा प्रभु यीशु ख्रीष्ट: "सब कुछ उसके द्वारा उत्पन्न हुआ, और जो कुछ उत्पन्न हुआ है, उसमें से कुछ भी उसके बिना उत्पन्न न हुआ" (यूहन्ना 1:3)। किन्तु, आत्मा भी सृष्टि में सम्मिलित था: "परमेश्वर का आत्मा जल की सतह पर मण्डराता था" (उत्पत्ति 1:2)। आत्मा के इस स्फूर्तिदायक कार्य के द्वारा जीवन को उत्पन्न किया गया।

यह एक महत्वपूर्ण बात है कि छुटकारा एक त्रिएकतावादी कार्य है। पिता ने पुत्र को संसार में भेजा (1 यूहन्ना 4:14)। पुत्र ने उस सम्पूर्ण कार्य को किया जो कि हमारे उद्धार के लिए आवश्यक था—सिद्ध आज्ञाकारिता का जीवन जीया और एक सिद्ध सन्तुष्टि को उपलब्ध कराया (फिलिपियों 3:9, 1 कुरिन्थियों 15:3)। परन्तु इन सब कार्यों से हमें कुछ लाभ प्राप्त नहीं होगा जब तक कि इन्हें हम पर व्यक्तिगत रीति से लागू न किया जाए। इसलिए पिता और पुत्र ने उद्धार को हम पर लागू करने के लिए इस जगत में पवित्र आत्मा को भेजा (यूहन्ना 15:26; गलातियों 4:6)। नये नियम में पवित्र आत्मा की भूमिका प्रमुखता से और मुख्य रीति से विश्वासियों पर ख्रीष्ट के कार्य को लागू करना है।

तृतीय व्यक्ति

क्या आप जानते हैं कि पवित्र आत्मा कौन है? क्या आप पवित्र आत्मा को व्यक्तिगत सम्बन्ध के आधार पर समझते हैं? या फिर आत्मा आपके लिए एक अस्पष्ट, धुँधला, अमूर्त अवधारणा या एक भ्रामक, आकारहीन शक्ति है? शक्तियाँ स्वयं अपने में तो अवैयक्तिक होती हैं। परन्तु पवित्र आत्मा कोई एक अमूर्त शक्ति नहीं है। वह तो एक व्यक्ति है जो कि परमेश्वर के लोगों को मसीही जीवन के लिए सशक्त करता है। अगले कुछ संक्षिप्त अध्यायों में हम लोग कुछ उन रीतियों के विषय में विचार करेंगे जिनके अनुसार वह उस उद्देश्य को पूरा करता है।

अध्याय 2

जीवन दाता

The Life Giver

अमरीकी राष्ट्रपति पद के लिए 1976 में चुनावी प्रचार के समय, जिमी कार्टर ने "नया जन्म" प्राप्त करने के विषय में बात की थी। लगभग उसी समय चार्ल्स कोल्सन जो कि राष्ट्रपति निक्सन के परामर्शदाता रह चुके थे, उन्होंने एक पुस्तक का विमोचन किया जिसमें उन्होंने ख्रीष्ट की ओर अपने हृदय-परिवर्तन का वर्णन किया। उसका शीर्षक मात्र यह था *नया जन्म (Born Again)*। शीघ्र ही यह शब्द जो अभी तक केवल सुसमाचारवादी *(evangelical)* मसीहियों में ही समान्य उपयोग में रहा था अब वह राष्ट्रीय स्तर पर प्रमुखता प्राप्त कर रहा था।

उस समय से "नया जन्म" शब्द को उन सब प्रकार के उपयोगों के लिए

अपनाया गया है जिनका कि उस प्रकार के आत्मिक परिवर्तन से कुछ लेना देना नहीं था जो कि कार्टर और कोल्सन के मन में था। उदाहरण के लिए, एक धावक जो कि अपने आजीविका *(career)* में पुनः लौट आने को अनुभव करता है तो वह अपने कौशल के सम्बन्ध में "नया जन्म" प्राप्त करने की बात कर सकता है। एक प्रकार से इस महत्वपूर्ण शब्द का वास्तविक अर्थ प्रायः इसके उपयोग और दुरोपयोग के कारण अस्पष्ट हो गया है।

नये जन्म *(born again)* का विचार, आत्मिक पुनःजन्म *(rebirth)* का अनुभव करना, सीधे यीशु की शिक्षा से आता है। हम यह शिक्षा यूहन्ना के सुसमाचार के तीसरे अध्याय में पाते हैं, जहाँ यूहन्ना यीशु और नीकुदेमुस नामक एक यहूदी अगुवे के बीच हुए भेंट को अभिलेखित करता है।

यूहन्ना लिखता है: "फरीसियों में से नीकुदेमुस नाम का एक मनुष्य था, जो यहूदियों का एक अधिकारी था, उसने रात को यीशु के पास आकर कहा, 'हे रब्बी, हम जानते हैं कि तू परमेश्वर की ओर से आया हुआ गुरु है, क्योंकि इन चिन्हों को जो तू दिखाता है कोई नहीं दिखा सकता जब तक कि परमेश्वर उसके साथ न हो'" (पद 1–2)। नीकुदेमुस सम्भवतः रात के समय यीशु के पास इसलिए आया था क्योंकि वह उसके साथ दिखाई नहीं देना चाहता था, परन्तु वह चापलूसी करते हुए आया तथा उसने यीशु की यह कह कर बढ़ाई करी कि वह "परमेश्वर की ओर से आया हुआ गुरु है।" किन्तु यीशु ने उसे बीच में ही टोक दिया और कहा "मैं तुझ से सच सच कहता हूँ कि जब तक कोई नया जन्म न ले, वह परमेश्वर का राज्य नहीं देख सकता" (पद 3)। यीशु ने कहा कि परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने के लिए पुनःजन्म एक आवश्यक माँग है।

यह *अनिवार्य आवश्यकता* है। यदि आप पुनरुजीवित *(regenerate)* नहीं हुए हैं, तो आप परमेश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं कर सकते हैं।

नीकुदेमुस उसको नहीं समझ पाया; उसने यीशु के शब्दों को फूहड़, शारीरिक रीति से व्याख्यायित किया। उसने पूछा: "बूढ़ा आदमी कैसे जन्म ले सकता है? क्या वह अपनी माता के गर्भ में दूसरी बार प्रवेश करके जन्म ले सकता है?" (पद 4)। यीशु ने उसे दूसरी बार उत्तर दिया और कहा, "मैं तुझ से सच सच कहता हूँ कि तब तक कोई जल और आत्मा से न जन्मे, वह परमेश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं कर सकता" (पद 5)। तो नया जन्म का विचार या पुनःजन्म को अनुभव करना जिम्मी कार्टर, चक कोल्सन, या सामान्यतः सुसमाचारवादी मसीहियों ने नहीं खोजा था। यह स्वयं यीशु की शिक्षाओं में पाया जाता है। यह शिक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें यीशु परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने के लिए एक आवश्यक माँग का वर्णन करता है।

जब मैं किसी व्यक्ति को यह कहते हुए सुनता हूँ कि, "मैं एक नया-जन्मा मसीही हूँ, तो मैं थोड़ा बहुत व्यथित होता हूँ। इस प्रकार के वाक्य के साथ क्या त्रुटि है? भला और किस प्रकार का मसीही पाया जाता है? यदि परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने के लिए पुनःजन्म पूर्णतः अनिवार्य है, जैसा कि यीशु ने कहा था कि वह है, तो फिर एक न-नया-जन्म पाया हुआ मसीही जैसी कोई बात हो ही नहीं सकती है। "नया-जन्म पाया हुआ मसीही" कहना तो मानो यह कहना हुआ कि "मसीही मसीही।" यह तो अतिरिक्तता हुई, एक प्रकार से ईश्वरविज्ञानीय हकलाहट।

दूसरी ओर, क्या "नया-जन्म प्राप्त ग़ैर-मसीही" होना सम्भव है? मैंने लोगों को यह कहते हुए सुना है, "मैं नया-जन्म प्राप्त मुसलमान" हूँ या फिर "मैं नया-जन्म प्राप्त बौद्धधर्मी" हूँ। मैं उनको बताना चाहता हूँ कि यदि उन्होंने नये नियम के अर्थ में नया जन्म प्राप्त किया है, तो वे अब मुसलमान या बौद्धधर्मी नहीं रहे। केवल वही लोग जो नया जन्म प्राप्त करते हैं वे ही मसीही हैं।

आत्मिक मृत्यु से जीवन तक

यह बात अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि आत्मिक पुनः जन्म में पवित्र आत्मा के कार्य के विषय में हमारे पास सटीक समझ हो। ऐसी समझ को प्राप्त करने के लिए सबसे उत्तम स्थान प्रेरित पौलुस के द्वारा लिखी गई इफिसियों की पत्री का दूसरा अध्याय है। हम वहाँ पर पढ़ते हैं:

> तुम तो उन अपराधों और पापों के कारण मरे हुए थे, जिनमें तुम पहिले इस संसार की रीति और आकाश में शासन करने वाले अधिकारी अर्थात् उस आत्मा के अनुसार चलते थे जो अब भी आज्ञा न मानने वालों में क्रियाशील है। उन्हीं में हम सब भी पहिले अपने शरीर की लालसाओं में दिन बिताते थे, शारीरिक तथा मानसिक इच्छाओं को पूरा करते थे, और अन्य लोगों के समान स्वभाव ही से क्रोध की सन्तान थे। परन्तु परमेश्वर ने जो दया का धनी है, अपने उस महान् प्रेम के कारण जिस से

> उसने हमसे प्रेम किया, जबकि हम अपने अपराधों के कारण मरे हुए थे उसने हमें मसीह के साथ जीवित किया—अनुग्रह ही से तुम्हारा उद्धार हुआ है—और मसीह यीशु में उसके साथ उठाया और स्वर्गीय स्थानों में बैठाया। (पद 1 – 6)

जिस भाषा और चित्रण का उपयोग प्रेरित इस खण्ड में करता है उसका सम्बन्ध जीवन और मृत्यु से है। वह घोषणा करता है कि मसीही लोग "जीवित किये" गये हैं। परन्तु यदि उन्हें अभी जीवित किया गया है, तो फिर वह पहले क्या थे? वे "अपराधों और पापों" में मरे हुए थे। तो, पौलुस एक प्रकार के पुनरुत्थान की बात कर रहा है, उन लोगों का एक ऐसा परिवर्तन जो नए जीवन के लिए मरे हुए हैं।

हमें यह समझने की आवश्यकता है कि यहाँ पर किस प्रकार की मृत्यु पर दृष्टि डाली जा रही है। पौलुस शारीरिक पुनरुत्थान की बात नहीं कर रहा है क्योंकि वह शारीरिक मृत्यु के विषय में नहीं बात कर रहा है। वे लोग जो कि पवित्र आत्मा के द्वारा जीवित किये गये हैं, वे इस अनुभव से पहले जीवित, श्वास लेते हुए जैविक प्राणी थे। मसीही बनने से पूर्व भी मेरा हृदय धड़कता था, मेरे फेफड़े फूलते और पिचकते थे, और मेरा मस्तिष्क सक्रिय था (यद्यपि मेरे शिक्षकगण कभी-कभार संदेह करते थे)। किन्तु मैं आत्मिक रीति से मृतक था। मैं परमेश्वर की बातों के प्रति मृतक था क्योंकि मैं केवल और सम्पूर्णतः से उस बात के लिए अस्तित्व में था जिसे यीशु और प्रेरितों ने "शरीर" कहा है।

नीकुदेमुस से अपने वार्तालाप में, यह समझाने के पश्चात् कि कोई भी परमेश्वर के राज्य में तब तक नहीं प्रवेश कर सकता है जब तक कि वह पानी और आत्मा से जन्म न ले, यीशु ने आगे यह कहा: जो शरीर से जन्मा है वह शरीर है, और जो आत्मा से जन्मा है वह आत्मा है। आश्चर्य न कर कि मैंने तुझ से कहा, 'अवश्य है कि तू नया जन्म ले।' हवा जिधर चाहती है उधर चलती है और तू उसकी आवाज़ सुनता है, परन्तु यह नहीं जानता कि वह किधर से आती और किधर को जाती है। प्रत्येक जन जो आत्मा से जन्म लेता है वह ऐसा ही है" (यूहन्ना 3:6–8)।

यहाँ पर यीशु ने पवित्र आत्मा के सामर्थ्य और मानव शरीर के सामर्थ्य के बीच में भेद किया। वह कहता है, "जो शरीर से जन्मा है वह शरीर है।" वह लोगों के विषय में बात कर रहा था, और वह केवल यह नहीं कह रहा था कि मनुष्य लोग शारीरिक देहों के साथ जन्म लेते हैं, परन्तु यह कि वे जन्म से ही पतित हैं। इसका अर्थ यह है कि उनके पास आत्मिक जीवन नहीं है। इसके विपरीत, वे आत्मिक रीति से मृतक जन्मे हैं।

सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र में आधुनिक मानव के लिए सम्भवता इस अभिकथन से अधिक कोई और बात घृणास्पद नहीं है कि प्रत्येक मनुष्य आत्मिक मृत्यु की दशा में जन्म लेता है। यह विचार तो वृहत् मसीही समुदाय के लिए भी घृणास्पद है। अधिकतर अंगीकार करने वाले मसीही स्वीकारते हैं कि मानव जाति में कुछ तो कमी है, तथा हम सभी पापी हैं और हममें से कोई भी सिद्ध नहीं है। परन्तु सौ में से एक भी मसीही वास्तव में यह विश्वास नहीं करता है कि प्रत्येक मनुष्य पहले से ही आत्मिक रीति से मृत होता है जब वह इस संसार

में प्रवेश करता है। यहाँ तक कि बिली ग्राहम भी शारीरिक मनुष्य के विषय में यह बात करते थे कि वह घातक रीति से अस्वस्थ है और निन्यानवे प्रतिशित मृत है, परन्तु वे मनुष्य को सौ प्रतिशत मृत नहीं मानते थे। इस विचार का तिरस्कारा जाना इतना व्यापक है कि मसीहियत के कुछ प्रमुख प्रवक्ता भी इसका खण्डन करने के लिए सहमत हैं। वे सम्पूर्ण आत्मिक मृत्यु के विचार को ग्रहण नहीं करते हैं।

तौभी, पौलुस इसी बात को स्पष्टता से कहता है। हम आगमन ही से आत्मिक रीति से मृत होते हैं—केवल निर्बल, अस्वस्थ, गम्भीर रीति से रोगग्रस्त, या अचेतन अवस्था में ही नहीं। कोई भी आत्मिक हृदयगति नहीं, आत्मिक श्वास नहीं, मस्तिष्क में कोई भी आत्मिक गतिविधि नहीं होती है। हम आत्मिक रीति से मृतक ही जन्म लेते हैं, तथा हम ऐसे ही बने रहते हैं—जब तक कि परमेश्वर पवित्र आत्मा हमको जीवित नहीं बनाता है।

एक रीति और एक अधिकारी के अनुसार चलना

पौलुस इफिसियों को बताता है, “तुम तो उन अपराधों और पापों के कारण मरे हुए थे, जिनमें तुम पहिले इस संसार की रीति और आकाश में शासन करने वाले अधिकारी अर्थात् उस आत्मा के अनुसार चलते थे” (2:1)। वह मसीहियों को सम्बोधित कर रहा है, परन्तु प्रत्येक मसीही अपने जीवन के किसी न किसी पड़ाव में तो ग़ैर-मसीही रहा होगा, और प्रत्येक ग़ैर-मसीही व्यवहार के एक ही पद्धति को प्रदर्शित करते हैं। पौलुस कहता है कि जो

आत्मिक रीति से मृत हैं वे एक रीति के अनुसार और एक अधिकारी का अनुसरण करते हैं।

रोमियों 3 में पौलुस लिखता है: "कोई धर्मी नहीं, एक भी नहीं। कोई समझदार नहीं। कोई भी नहीं जो परमेश्वर को खोजता है। सब भटक गए, वे सब निकम्मे बन गए हैं; कोई भलाई करने वाला नहीं, एक भी नहीं" (पद 10–12)। वह कहता है कि "सब भटक गए" हैं, सब मार्ग से हट गए हैं। यदि स्वभाव से ही हम परमेश्वर को नहीं खोजते हैं, तो क्या यह कोई आश्चर्य की बात है कि हम परमेश्वर की ओर जाने वाले मार्ग से हट जाते हैं? यह बात मुझे चित्ताकर्षक जान पड़ती है कि नये नियम में ख्रीष्ट के अनुयायियों ने अपने आपको "मसीही" कह कर सम्बोधित नहीं किया था। वे अन्ताकिया में पहली बार मसीही कहलाए गए (प्रेरितों के कार्य 11:26), परन्तु यह माना जाता है कि इस शब्द को ग़ैर-मसीहियों के द्वारा मसीहियों की निंदा करने के लिए बनाया गया था। जिस शब्द या वाक्याँश का उपयोग आरम्भ में मसीही लोगों ने अपने आपको वर्णित करने के लिए किया था वह था "मार्ग" के लोग (प्रेरितों के कार्य 19:9, 23), क्योंकि उन्होंने ख्रीष्ट को दो मार्गों के विषय में बात करते सुना था, एक सकरा मार्ग और एक चौड़ा मार्ग (मत्ती 7:13–14)। लोगों की एक विशाल बहुसंख्या भ्रष्ट-मार्ग पर जा रही है। वास्तविकता तो यह है कि हम सब इसी मार्ग पर आरम्भ करते हैं क्योंकि चौड़ा मार्ग तो इस संसार की रीति के अनुसार है। पौलुस कहता है कि "उन्हीं में हम सब भी पहिले अपने दिन बिताते थे" (इफिसियों 2:3)। आत्मिक रीति से मृत होने का तात्पर्य है सांसारिक होना। यह तो बन्धुवों की नाईं ईश्वर-रहित समाज की शिक्षाओं और विधियों को ग्रहण करना तथा उनका पालन करना है।

आत्मिक रीति से मृत न केवल इस संसार की रीति के अनुसार चलते हैं, परन्तु वे तो "आकाश में शासन करने वाले अधिकारी" के अनुसार भी चलते हैं (पद 2)। क्या इसके विषय में कोई संशय है कि यहाँ पर पौलुस किसके विषय में सोच रहा है? यही तो शैतान के लिए पौलुस की उपाधि है "वह आत्मा जो अब भी आज्ञा न मानने वालों में क्रियाशील है" (पद 2)। वे सब जो आत्मिक रीति से मृत हैं परमेश्वर और उसकी धार्मिक माँगों को तिरस्कारने में शैतान की इच्छाओं का पालन करते हैं।

तो यह है हमारी स्वाभाविक दशा। यह उस बात का चित्रण है जिसे ईश्वरविज्ञान मूल पाप *(original sin)* कहता है, वह प्राणनाशक भ्रष्टाचार अर्थात् आत्मिक मृत्यु की स्थिति, जिसमें हम सब जन्म लेते हैं।

पुनः सृष्टि का कार्य

यह पवित्र आत्मा की सेवा और कार्य है कि वह उन लोगों के पास आए जो आत्मिक रीति से मृत हैं, जो कि इस संसार की रीति के अनुसार तथा आकाश में शासन करने वाले अधिकारी के अनुसार चलते हैं, अपने शरीर और मन की लालसाओं को पूरा करते हैं, तथा उनकी पुनः सृष्टि *(re-create)* करे जब वह उन्हें पुनरुजीवित *(regenerate)* करता है। "पुनरुजीवित करने" का अर्थ है "नये रीति से उत्पन्न करना।" पुनरुजीवन के माध्यम से आत्मा उन लोगों को जीवन देता है जिनके पास कोई भी आत्मिक जीवन नहीं है।

पुनरुजीवन *(Regeneration)* वह कार्य है जिसे पवित्र आत्मा लोगों के प्राणों में तत्काल रीति से करता है। जब मैं "तत्काल रीति से" कह रहा हूँ

तो मेरा तात्पर्य "त्वरित" *(quickly)* से नहीं है परन्तु "बिना किसी मध्यवर्ती माध्यम" से है। वह किसी व्यक्ति को औषधी की केवल एक ही मात्रा नहीं देता है; किन्तु इसके विपरीत आत्मा अव्यवहित रीति से *(directly)* आत्मिक मृत्यु में से आत्मिक जीवन में लेकर आता है। हम इस तत्काल रीति से होने वाले कार्य को जिब्राइल के शब्दों में अभिव्यक्त होते देखते हैं जब उसने मरियम से बातचीत की: "पवित्र आत्मा तुझ पर उतरेगा और परमप्रधान का सामर्थ्य तुझ पर आच्छादित होगा" (लूका 1:35)। उस परिदृश्य में यीशु का जीवन तत्काल रीति से *(immediately)* और अव्यवहित रीति से उत्पन्न होता है, न कि सामान्य प्रजननीय प्रक्रियाओं से।

इस अर्थ में, हम सृष्टि के कार्य में प्रकट हुए पवित्र आत्मा के सामार्थ्य को एक रीति से छुटकारे में पुनरावृत्ति होते देखते हैं। वही परमेश्वर जगत को छुड़ाता है जिसने जगत को सृजा है। जैसे सृष्टि का कार्य त्रिएकतावादी *(Trinitarian)* था ठीक वैसे ही छुटकारे का कार्य त्रिएकतावादी है। हम इसे स्पष्ट रीति से उत्पत्ति 1 में पाते हैं, जहाँ पर हम पढ़ते हैं कि: "आदि में परमेश्वर ने आकाश और पृथ्वी की सृष्टि की। पृथ्वी बेडौल और वीरान थी, और अथाह जल की सतह पर अन्धियारा था" (पद 1–2)। ये पावन पवित्रशास्त्र के प्रथम वाक्य हैं। इन पदों के तुरन्त पश्चात् ही हम इस अन्धकार, रिक्तता और बेडौलपन के मध्य में परमेश्वर के कार्यों का एक संक्षिप्त विवरण पढ़ते हैं: "और परमेश्वर का आत्मा जल की सतह पर मण्डराता था" (पद 2)। नये नियम में पवित्र आत्मा को एक कबूतर की नाईं चित्रित किया गया है; सम्भवतः यहाँ पर उसे एक माता पक्षी के रूप में चित्रित किया गया है जो

कि अपने बच्चों की सुरक्षा के लिए उनके ऊपर मण्डराती है। यीशु ने कुछ इस प्रकार की अवधारणा को तब व्यक्त किया जब उसने यरूशलेम नगर के लिए विलाप किया और कहा: "हे यरूशलेम, हे यरूशलेम, वह नगरी जो नबियों को मार डालती है और जो तेरे पास भेजे गए हैं उन्हें पत्थरवाह करती है! कितनी बार मैंने चाहा कि जिस प्रकार मुर्गी अपने बच्चों को अपने पँखों तले इकट्ठा करती है, तेरे बच्चों को इकट्ठा करूँ पर तू ने यह नहीं चाहा!" (लूका 13:34)। सृष्टि के ऊपर उसको पथप्रदर्शन और सुरक्षा प्रदान करने के लिए आत्मा मण्डराता है, और यही वह पुनरुजीवन के कार्य में करता है।

पवित्रशास्त्र स्पष्ट करता है कि एक कार्य जो कि केवल और केवल परमेश्वर ही कर सकता है वह यह है कि वह मृत्यु में से जीवन ला सकता है और कुछ नहीं में से कुछ ला सकता है। सृष्टि में जो अगला कार्य होता है वह है परमेश्वर द्वारा उजियाले का रचा जाना: "तब परमेश्वर ने कहा, 'उजियाला हो,' और उजियाला हो गया" (उत्पत्ति 1:3)। परमेश्वर द्वारा उजियाले को रचने के लिए किसी बटन को दबाने की और न ही दो टहनियों को रगड़ कर चिंगारी उत्पन्न करने की आवश्यकता पड़ी। उसके सम्प्रभु आज्ञा ने उजियाले की रचना की। उसी प्रकार से, उसका ईश्वरीय सामर्थ्य वहाँ पर जीवन को लाता है जहाँ पर कोई भी जीवन नहीं होता है।

यीशु लाज़र की कब्र पर खड़ा होता है जो कि चार दिनों से मृत है और वह एक ऊँची वाणी में पुकारता है, "लाज़र, बाहर निकल आ" (यूहन्ना 11:43)। जब यीशु इन शब्दों को बोलता है, तब लाज़र का हृदय तुरन्त धड़कने और रक्त को प्रवाहित करने लगता है। उसके मस्तिष्क की क्रिया पुनः आरम्भ हो

जाती है। उसकी देह में जीवन लौट आता है, और वह कब्र में से बाहर निकल आता है। हमारे नये जन्म में हमारे साथ भी ठीक यही होता है। वही आत्मा जिसने जीवन को धरातल से बाहर निकाला और जो लाज़र को कब्र में से वापस लाया, वही आत्मा हमको दूसरी बार जन्म देने के द्वारा आत्मिक मृत्यु से जीवित करता है।

अध्याय तीन

अधिवक्ता (सहायक)

The Advocate

उन्नीसवीं शताब्दी में, यूरोप में दो दर्शनशास्त्रियों ने अपने समाज पर और तत्पश्चात् इतिहास पर विशाल प्रभाव डाला। दोनों ही पाश्चात्य सभ्यता के भ्रष्टाचार को लेकर अत्यन्त चिन्तित थे। दोनों ने उन्नीसवीं-शताब्दी के यूरोप को पतनोन्मुख करके वर्णित किया। परन्तु दोनों ने उस पतन के लिए अत्यन्त भिन्न कारणों को देखा और अत्यन्त ही भिन्न समाधानों का प्रस्ताव रखा।

उनमें से एक थे सोरेन कीर्केगार्ड (1813–55) *(Søren Kierkegaard),* डैनमार्क का एक दर्शनशास्त्री। उन्होंने यह उलाहना दी कि उनके युग में सभ्यता के पतन का कारण मसीहियत को प्रतिदिन के जीवन में एक जीवन्त रूप में लागू करने में असफलता थी। उनका मानना था कि मसीहियत

अधिकाँशतः एक मृत शास्त्रसम्मतता *(orthodoxy)* बन कर रह गयी है जो कि आवेगहीन *(dispassionate)* है तथा दिन-प्रतिदिन के प्रकरणों से पृथक हो गई है। जैसा कि उन्होंने कहा उनका युग "महत्वहीन" हो गया था। इसलिए उन्होंने मसीही जीवन में पुनः उत्साही होने के लिए पुकार दी। जब वह इस विषय को लेकर निराश होते थे, तो उन्हें पुराने नियम के पन्नों की ओर लौटना भाता था क्योंकि वहाँ पर वह ऐसे लोगों को पाते थे जो अधिक वास्तविक प्रतीत होते थे। वे लोग सन्त और पापी थे और उनके विषय में कुछ भी छल, कपटपूर्ण, या कृत्रिम नहीं था। परमेश्वर ने वास्तव में उनके जीवनों में कार्य किया, और परिणामस्वरूप उनमें परमेश्वर के लिए एक उत्साह था।

एक अन्य प्राध्यापक ने मुझसे एक बार पूछा, "आप कलीसिया की दृढ़ता को आज कैसे आँकते हैं?" मैंने उत्तर दिया कि मुझे यह निरन्तर स्पष्ट होता जा रहा है कि कलीसिया में अनेक लोगों के पास जीवन्त विश्वास है, वे पवित्रशास्त्र की आधारभूत सिद्धान्तों पर विश्वास तो करते हैं, परन्तु उनमें से बहुत ही कम मसीही लोग विश्वास को एक उद्देश्य तथा अपने जीवनों के मुख्य कार्य के रूप में देखते हैं। यही वह बात थी जिसे कीर्केगार्ड ने देखने की लालसा की थी।

फ्रेडरिक नीत्शे-*Friedrich Nietzsche* (1844–1900), एक जर्मनवासी थे तथा ऐसे दूसरे दर्शनशास्त्री थे जिन्होंने सभ्यता की मृत्यु के विषय में विलाप किया था। किन्तु, नीत्शे का यह विश्वास था कि मसीहियत का हानिकारक प्रभाव पाश्चात्य सभ्यता की सबसे बड़ी समस्या थी। उन्हें इस बात का दृढ़ विश्वास था कि मसीहियत की नैतिकता ने, उसके नम्रता और दया के गुणों के साथ, मानव जाति को शक्तिहीन बना दिया था। उनको ऐसा आभास होता था कि मसीहियत ने सबसे अधारभूत मानवीय धुन—सामर्थ्य के लिए

इच्छाशक्ति—को नकारा और निर्बल बनाया था। नीत्शे ने कहा था कि यह जीवन तो सामर्थ्य प्राप्त करने के लिए एक संघर्ष है। हम सब एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धात्मक उद्यम में लगे हुए हैं तथा एक दूसरे के ऊपर प्रबलता की खोज करते हैं।

इस प्रकार, नीत्शे ने एक नयी सभ्यता का प्रस्ताव रखा जो कि एक नए प्रकार के मानव प्राणी के द्वारा लाया जाएगा, एक नए प्रकार के अस्तित्ववान नायक के द्वारा जिसको कि उन्होंने ऊबरमेंख-*übermench* अर्थात् "सूपरमैन"-*superman* अतिमानव कहा। उन्होंने अतिमानव का वर्णन एक ऐसे जन की नाईं किया जो कि अपने घर को ज्वालामुखी—वेसुवियस पर्वत की ढलान पर बनाएगा। इस प्रकार वह अपने घर को एक ऐसे स्थान पर बनाएगा जहाँ पर वह किसी भी क्षण में नाश हो सकता है, यदि वह ज्वालामुखी फटता है। उसी प्रकार वह अपने जलयान को नये स्थानों पर ले जाएगा। उसका सामना समुद्री दैत्यों या फिर आँधियों से हो सकता है जो कि उसके जलयान को डुबो देंगे और उसका घात करेंगे, परन्तु अतिमानव के लिए यह कोई रूकावट नहीं होगी।

नीत्शे की अवधारणा के अनुसार अतिमानव प्रमुख रीति से एक विजेता है और उसका मुख्य गुण साहस है, क्योंकि नीत्शे यह विश्वास करते थे कि साहस वह मुख्य बात थी जिसकी उन्नीसवीं शताब्दी की संस्कृति में घटी थी। परन्तु जब नीत्शे ने साहस के विषय में बात की तो उन्होंने उसमें एक विचित्र परिवर्तन किया। उन्होंने "द्वन्द्वात्मक साहस" के लिए गुहार लगाई। दर्शनशास्त्र में *द्वन्द्वात्मक (dialectical)* शब्द का सम्बन्ध विरोधाभास की स्थिति से है, जिसमें कोई वस्तु किसी अन्य वस्तु के वैपरीत्यता *(antithesis)* के रूप में खड़ी होती है। इन बातों को कभी भी सुलझाया नहीं जा सकता है।

तो फिर द्वन्द्वात्मक साहस क्या है? नीत्शे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जीवन अन्ततः शून्यवादी *(nihilistic)* है अथवा निरर्थक है। उनका यह विश्वास था कि परमेश्वर मृतक है और क्योंकि कोई परमेश्वर नहीं है इसलिए परम भलाई या सत्य जैसी कोई भी वस्तु नहीं है। मानव अस्तित्व में कोई भी वस्तुनिष्ठ *(objective)* महत्व नहीं है; जीवन का अर्थ केवल वही है जो हम बनाते हैं। इसलिए हमें जगत में साहस को प्रदर्शित करना होगा जो इतना विरोधी तो नहीं जितना कि उदासीन है और यही वह बात है जिसे अतिमानव सम्पन्न करेगा। यह है द्वन्द्वात्मक साहस—विश्व की उदासीनता का सामना करने का साहस। सारतात्विक रुप में, नीत्शे कह रहे थे कि: "जीवन अर्थहीन है; इसलिए साहस रखो। तुम्हारा साहस अर्थहीन है, तौभी उसे थामे रहो।"

"एक अन्य सहायक"

कीर्केगार्ड और नीत्शे का पवित्र आत्मा के कार्य से क्या लेना देना है? यीशु ने अपने क्रूसीकरण से एक रात पूर्व ऊपरी कोठी में अपने शिष्यों को आत्मा से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण प्रतिज्ञाएँ दीं। उसने उनसे कहा कि वह प्रस्थान करने पर है और वे उसके साथ नहीं जा सकते हैं परन्तु उसने यह प्रतिज्ञा की, "मैं पिता से विनती करूँगा, और वह तुम्हें एक और सहायक देगा कि वह सदा तुम्हारे साथ रहे" (यूहन्ना 14:16)। कुछ अनुवाद "सहायक" *(हैल्पर-Helper)* शब्द के स्थान पर "सान्त्वनादाता" *(कम्फर्टर-Comforter)* का उपयोग करते हैं। जिस यूनानी शब्द का अनुवाद "सहायक" या "सान्त्वनादाता"

के रूप में किया गया है वह है *पैराक्लीटोस-parakletos;* उसी से अंग्रज़ी का शब्द *पैराक्लीट-paraclete* आता है। इस शब्द में उपसर्ग *para-पैरा* सम्मिलित है, जिसका अर्थ है "के साथ में" और उसमें मूल शब्द है जो कि *क्लीटोस-kletos* क्रिया का एक रूप है जिसका अर्थ है "बुलाना।" इस प्रकार एक *पैराक्लीटोस-parakletos* वह जन होता था जिसको कि किसी अन्य के साथ में खड़े होने के लिए बुलाया जाता था। यह प्रायः न्यायवादी *(वकील)* के लिए उपयोग किया जाता था, परन्तु किसी सामान्य न्यायवादी के लिए नहीं। तकनीकी रूप से, *पैराक्लीटोस* वह पारिवारिक न्यायवादी होता था जो कि स्थायी रीति से कार्य करता था। किसी भी समय जब परिवार में कोई समस्या उठ खड़ी होती थी, *पैराक्लीटोस* को बुलाया जाता था, और वह तुरन्त आकर संघर्ष में सहायता प्रदान करता था। पवित्र आत्मा के साथ हमारा सम्बन्ध ऐसा ही है। हम परमेश्वर के परिवार का भाग हैं, और हमारे परिवार का न्यायवादी पवित्र आत्मा स्वयं है। वह हमारे साथ आने के लिए सर्वदा उपस्थित है और समस्या के समय में हमारा सहायक है।

मेरा मानना है कि नये नियम के अधिकाँश अंग्रेज़ी अनुवाद *पैराक्लीटोस-parakletos* शब्द का निम्नतर स्तर का अनुवाद करते हैं, विशेष करके वे जो इसको कम्फर्टर-*"Comforter"* करके अनुवाद करते हैं। ऐसा अनुवाद तो मुख्य बात को खो देता है। जब यीशु ने कहा कि वह पिता से कहेगा कि वह शिष्यों के पास एक और पैराक्लीट को भेजे, तो वह यह नहीं कह रहा था कि जब वे चोटिल होंगे और टूटेंगे तो वह किसी को भेजेगा जो आएगा और उनके घावों को चंगा करेगा। यह सत्य है कि पवित्र आत्मा का एक महत्वपूर्ण कार्य टूटे हुए हृदयों को सन्तावना प्रदान करना है; वह तो गिलाद का मरहम

(यिर्मयाह 8:22) है जब हम दुख और विलाप के मध्य में होते हैं। परन्तु हमें उस सन्दर्भ को स्मरण रखना चाहिए जिसमें यीशु ने आत्मा को भेजने की प्रतिज्ञा की थी—वह अपने शिष्यों को बता रहा था कि वह अभी प्रस्थान करने वाला है। वे उसके बिना इस बैरी जगत में रहने वाले थे, जहाँ पर उनसे वैसे ही घृणा की जाएगी जैसा कि उसके साथ घृणा की गयी थी। उनके जीवनों के प्रत्येक क्षण संसार से दबाव, बैर और सताव से भरे होंगे। इस प्रकार के परिदृश्य में कोई भी बिना सहायता के नहीं प्रवेश करना चाहता है।

किंग जेम्स वर्ज़न *(King James Version)* के अनुवादकों ने *पैराक्लीटोस* को अंग्रेज़ी के शब्द "कम्फर्टर-सान्त्वनादाता" के रूप में इसलिए अनुवाद किया था क्योंकि उस समय अंग्रेज़ी भाषा लातीनी में अपने ऐतिहासिक जड़ों से और भी निकटता से जुड़ी हुई थी। आज हम *कम्फर्ट*-सान्तवना शब्द को समस्या के मध्य में आराम और ढ़ाढस से जोड़ते हैं। परन्तु इसका आरम्भिक अर्थ भिन्न था। यह लातीनी भाषा के *comfortis-कम्फर्टिस* शब्द से आया है, जिसमें उपसर्ग *(com-कम,* जिसका अर्थ है "साथ में") और मूल जड़ *(fortis-फर्टिस, जिसका अर्थ है "दृढ़ता")*। तो, आरम्भ में उस शब्द का अर्थ था "दृढ़ता के साथ।" अतः, किंग जेम्स वर्ज़न के अनुवादक हमको बता रहे थे कि पवित्र आत्मा ख्रीष्ट के लोगों के पास युद्ध के *पश्चात्* उनके घावों को चंगा करने के लिए नहीं परन्तु संघर्ष से *पूर्व* और *मध्य में* उनको दृढ़ करने के लिए आता है। यहाँ पर विचार यह है कि कलीसिया एक चिकित्सालय के रूप में नहीं संचालित होती है परन्तु एक सेना के रूप में, और

पवित्र आत्मा जीत और विजय सुनिश्चित् करने के लिए मसीहियों को सबल बनाने और सदृढ़ करने के लिए आता है।

"जयवन्त से भी बढ़कर"

तो नीत्शे ने कहा, "जीवन अर्थहीन है; किन्तु फिर भी साहस रखो।" यीशु ने भी अपने लोगों से कठिनाईं, विपत्ति और विरोध का सामना करते हुए भी साहसी होने के लिए कहा है, परन्तु उसने उन्हें अकारण साहस रखने के लिए नहीं कहा है। जैसा कि हम जानते हैं, यीशु ने अपने शिष्यों से कहा, "साहस रखो" (यूहन्ना 16:33), या जैसे कि कुछ अनुवादकों ने कहा है, "भयभीत मत हो।" किन्तु वह उनसे साहस रखने को मात्र साहस रखने के लिए ही नहीं कह रहा है। वह उन्हें एक कारण देता है कि क्यों उनके पास मसीही जीवन के लिए भरोसा और आश्वासन होना चाहिए। उसने कहा, "साहस रखो–मैंने संसार को जीत लिया है।"

नीत्शे एक अतिमानव को चाहते हैं, एक जयवन्त होने वाले जन को। उन्हें तो यीशु की ओर देखना चाहिए था। उसने संसार को जीत लिया है और उसने ऐसा उसी आत्मा के सामर्थ्य में होकर किया जिसे उसने अपने लोगों को भेजा है। पवित्र आत्मा परमेश्वर के लोगों को सामर्थ्य और शक्ति देने के लिए आता है। इसके परिणामस्वरूप पवित्रशास्त्र कहता है, "हम उसके द्वारा जिसने हम से प्रेम किया जयवन्त से भी बढ़कर हैं" (रोमियों 8:27)। यह नीत्शे से एक स्तर ऊपर है।

इस प्रकार, पवित्र आत्मा का कार्य ख्रीष्ट के कार्य का पूरक है। ख्रीष्ट सबसे

पहला पैराक्लीट था, जो प्रायश्चित्त पदान कराने वाली अपनी मृत्यु के द्वारा हमें सुदृढ़ करने के लिए आया था। अब हमारे पास उस जीवन को जीने के लिए सबलता पवित्र आत्मा से आता है जिसके लिए ख्रीष्ट ने हमें बुलाया है।

अध्याय चार

पवित्र बनाने वाला

The Sanctifier

आपने क्या कभी विचार किया है कि पवित्र आत्मा को "पवित्र आत्मा" क्यों कहा जाता है? निस्सन्देह वह पवित्र है, परन्तु परमेश्वर पिता को भी उसकी निष्कलंक पवित्रता के लिए जाना जाता है और पवित्रता परमेश्वर पुत्र का भी एक गुण है। ऐसा कोई भी भाव नहीं है जिसके अनुसार पवित्र आत्मा त्रिएकता के अन्य दो सदस्यों से बड़े स्तर पर या अधिक मात्रा में पवित्रता को धारण किये हुए है। इसलिए ऐसा नहीं है कि उसके अत्यधिक पवित्रता के कारण हम उसे पवित्र आत्मा कहने के लिए प्रेरित होते हैं। इसी प्रकार आत्मा वास्तव में एक आत्मा है, परन्तु परमेश्वर पिता भी तो एक आत्मा है और परमेश्वर पुत्र भी *लोगॉस* त्रिएकता के द्वितीय व्यक्ति के रूप में अपने प्राणी *(being)* में एक आत्मा है। अतः यह तो स्पष्ट है कि हम

त्रिएकता के तृतीय व्यक्ति को पवित्र आत्मा इसलिए नामित नहीं करते हैं क्योंकि वह मात्र एक आत्मा है।

यह निम्नलिखित दो कारण हैं कि क्यों त्रिएकता के तृतीय व्यक्ति को पवित्र आत्मा करके जाना जाता है। प्रथम, *पवित्र* शब्द उसके उपाधि के साथ जुड़ा हुआ है क्योंकि आत्मा हमारे छुटकारे के कार्य में एक विशिष्ट कार्य को करता है। त्रिएकता के व्यक्तियों के मध्य में आत्मा वह मुख्य कर्ता है जो हमारे पवित्रीकरण *(sanctification)* के लिए कार्य करता है, उस प्रक्रिया को सक्षम करता है जिसके द्वारा हम ख्रीष्ट की समानता के अनुरूप किए जाते हैं और पवित्र *(holy)* बनाए जाते हैं।

मसीही लोग प्रायः मुझ से पूछते हैं, "मेरे जीवन के लिए परमेश्वर की इच्छा क्या है?" उनके पास सब प्रकार के प्रश्न होते हैं कि किससे उन्हें विवाह करना चाहिए, किस आजीविका को उन्हें चुनना चाहिए तथा अनेक प्रकार के अन्य प्रश्न। परन्तु हमारे जीवन के लिए परमेश्वर की मुख्य इच्छा के विषय में बाइबल अत्यन्त स्पष्ट है। प्रेरित पौलुस लिखते हैं, "परमेश्वर की इच्छा है कि तुम पवित्र बनो" (1 थिस्सलुनिकियों 4:3)। कई बार मैं मसीहियों को आत्मा के द्वारा अगुवाई किये जाने के विषय में सुनता हूँ। हाँ, पवित्र आत्मा समय-समय पर लोगों को विशिष्ट गन्तव्यों की ओर या फिर विशिष्ट कार्यों को करने के लिए अगुवाई प्रदान करता है, परन्तु पवित्र आत्मा द्वारा मुख्य अगुवाई पवित्रता के लिए है जैसा कि पवित्रशास्त्र में प्रस्तुत किया गया है। यह उसकी सामर्थ्य है जो पवित्रता में बढ़ने के लिए हममें कार्य करती है। हमें बहुत सावधान रहना है और परमेश्वर की इच्छा और आत्मा के अगुवाई के विषय में सीखने के लिए पवित्रशास्त्र के पन्नों पर जाने की आवश्यकता है, और न कि

जिस मसीही उपसंस्कृति में हम रहते हैं केवल उनमें प्रचलित शिक्षाओं को ही सुनना है। तो, पवित्र आत्मा को पवित्र आत्मा कहे जाने का मुख्य कारण यह है कि यह उसका विशिष्ट कार्य है जिससे कि वह ख्रीष्ट के चेलों को पवित्रीकरण के उनकी खोज में उन्हें सक्षम बनाए।

द्वितीय, त्रिएकता का जो तृतीय व्यक्ति है उसको पवित्र आत्मा इसलिए कहा जाता है क्योंकि आत्मा एक से अधिक प्रकार के होते हैं। पवित्रशास्त्र मानव की आत्मा में और परमेश्वर के आत्मा में भेद करता है। परन्तु यहाँ पर हमारे विचार करने हेतु यह महत्वपूर्ण बिन्दु है कि बाइबल शैतानी आत्माओं के विषय में भी बात करती है, अर्थात् ऐसी आत्माएँ जो परमेश्वर की ओर से नहीं हैं, तथा दुष्ट आत्माएँ जो कि एक मसीही की पवित्रीकरण के खोज में बाधा की इच्छा रखती हैं। इन दुष्ट आत्माओं और पवित्र आत्मा के बीच में जो मुख्य भेद है वह यथावत् पवित्रता के इसी बिन्दु पर है। दुष्ट आत्माएँ अपवित्र हैं, परन्तु पवित्र आत्मा पूर्णतः पवित्र है। इसी भेद के कारण ही प्रेरित यूहन्ना हमको चेताता है कि "प्रत्येक आत्मा की प्रतीति न करो, परन्तु आत्माओं को परखो कि वे परमेश्वर की ओर से हैं या नहीं" (1 यूहन्ना 4:1)।

अपने पापों को तर्कसंगत ठहराना

मैं इन बिन्दुओं पर इस कारण से बल दे रहा हूँ: क्योंकि मसीही जगत में हम में से अनेक लोग अपने पापों को तर्कसंगत ठहराने में महारथी हैं, और ऐसा मुख्य रीति से यह कहने के द्वारा इसे करते हैं कि हमें अमुक कार्य करने के

लिए पवित्र आत्मा के द्वारा अगुवाई प्राप्त हुई थी। यह कोई ऐसी समस्या नहीं है जिसका सामना मैं दस सालों में एक बार करता हूँ। मैं कम से कम सप्ताह में एक बार किसी न किसी अंगीकारीय मसीही से बात करता हूँ जो मुझे बताता है कि वह बिना बाइबलीय आधार के विवाह-विच्छेदन कर रहा है, तथा बाइबलीय माँगों के विपरीत विवाह करने जा रहा है, या फिर अपवित्रशास्त्रीय सिद्धान्तों के अनुसार किसी व्यवसाय को चला रहा है। वे विभिन्न कार्य करते हैं और फिर मुझे बताते हैं कि वे ऐसा करने के लिए स्वतन्त्रता की अनुभूति करते हैं क्योंकि "मैंने इसके विषय में प्रार्थना की और परमेश्वर ने मुझे शान्ती दी है" या फिर "पवित्र आत्मा ने ऐसा करने के लिए मेरी अगुवाई की है।"

जब मैं अबाइबलीय व्यवहार के लिए इस प्रकार के तर्कसंगतियों को सुनता हूँ तो मुझे यह बोध होता है कि ये लोग वास्तव में उस बात पर विश्वास करते हैं जिसे वे मुझे बता रहे हैं, परन्तु वे सत्य नहीं बोल रहे हैं। वे एक ऐसी बात बोल रहे हैं जो त्रुटिपूर्ण है—एक अत्यन्त गम्भीर त्रुटि। मैं इसे दो कारणों से जानता हूँ और ये कारण परमेश्वर के आत्मा के चरित्र के दो महत्वपूर्ण बातों पर आधारित हैं। प्रथम बात यह है कि वह पवित्र आत्मा है। द्वितीय बात यह है कि यीशु बहुधा उसको "सत्य का आत्मा" कह कर पुकारता है (यूहन्ना 14:17; 15:26; 16:13)। *पवित्र* आत्मा हमको कभी भी कोई ऐसा कार्य करने के लिए प्रलोभित नहीं करता है जो कि अपवित्र है। न ही पवित्र आत्मा हमको कभी भी असत्य को अपनाने के लिए प्रेरित करता है।

हम बाइबल को परमेश्वर के वचन के रूप में सम्बोधित करते हैं, और वह है भी। कलीसिया ने अपने विश्वास में यह अंगीकार क्यों किया कि पवित्रशास्त्र परमेश्वर का वचन है, इसके कई कारणों में से एक कारण है बाइबल का यह

दावा कि पावन पवित्रशास्त्र आरम्भ ही से परमेश्वर पवित्र आत्मा द्वारा प्रेरित था। यह बात सत्य है कि बाइबल सिखाती है कि पवित्र आत्मा ने, न केवल बाइबल की पुस्तकों के लेखन को ही प्रेरित किया है वरन् वह पवित्रशास्त्रों को प्रदीपन *(illumine)* करता है और उनको हमारी समझ पर लागू करता है। पौलुस लिखता है कि "परमेश्वर गड़बड़ी का परमेश्वर नहीं है" (1 कुरिन्थियों 14:33), और इसमें पवित्र आत्मा भी सम्मिलित है। इसका अर्थ यह है कि पवित्र आत्मा हमको कभी भी कुछ ऐसा करने के लिए नहीं सिखाता है जिसे वह पवित्रशास्त्र में सुस्पष्टतः से वर्जित करता है।

तो इसलिए जब बाइबल कहती है कि हमें आत्माओं को परखना चाहिए कि वे परमेश्वर की ओर से हैं या नहीं, तो यह हमें कैसे करना चाहिए? हमें किस प्रकार से परखना चाहिए? यह तो स्पष्ट है कि इस परख को बाइबलीय परख होना चाहिए क्योंकि हम जानते हैं कि पवित्रशास्त्रों में हमारे पास सत्य के आत्मा की शिक्षा है। इसलिए यदि मेरे भीतर एक भीतरी झुकाव, एक आभास या फिर कोई कामना है और मैं उस भीतरी अगुवाई को पवित्र आत्मा के साथ जोड़ना चाहता हूँ परन्तु मैं यह भी देखता हूँ कि मेरे हृदय में यह जो झुकाव है वह स्पष्टतः पवित्रशास्त्र में जो सिखाया जा रहा है उसके विपरीत है, तो मेरे पास सकारात्मक प्रमाण है कि मैं कामेच्छा, लालच या फिर कोई अन्य भीतरी भावना को पवित्र आत्मा की अगुवाई से भ्रमित कर रहा हूँ। ऐसा करना एक भयावह कार्य है।

हम आजकल मसीही समाज में इसके विषय में ऐसा लगभग कभी भी नहीं सुनते हैं क्योंकि मसीही लोग सरलता से यह कह कर स्वयं को आत्मिक प्रतीत कराते हैं कि परमेश्वर ने उक्त बात उनके हृदयों पर उण्डेली हैं या

परमेश्वर ने विभिन्न कार्य करने के लिए उनकी अगुवाई की है। प्रत्येक बार जब मैं ऐसे दावे को सुनता हूँ, तो मैं उस व्यक्ति से कहना चाहता हूँ कि: "आपको कैसे *ज्ञात* है कि परमेश्वर ने यह आपके हृदय में उण्डेला है? आपको कैसे पता कि यह बात आपकी स्वयं की महत्वकाँक्षा या आपके स्वयं की धनलोलुपता का प्रकटीकरण नहीं है?" मैं चाहता हूँ कि वह व्यक्ति मुझे उसके दृढ़ कथन का बाइबलीय आधार दिखाए। जैसा कि मैंने ऊपर कहा है कि मैं यह शंका नहीं करता हूँ कि पवित्र आत्मा किसी विश्वासी के ऊपर एक बोझ को उण्डेल सकता है तथा किसी विश्वासी की अगुवाई अलौकिक रीति से कर सकता है, परन्तु वह ऐसा सर्वदा पवित्रशास्त्र के अनुरूप और उसके द्वारा करता है। वह बाइबल में दिये अपने प्रकाशन के विरोध में कभी नहीं जाता है। तो इसलिए आत्माओं को जाँचने का एक उपाय है कि उनको आत्मा के स्वयं के सत्य के अनुसार परखना।

सिद्धान्त के प्रति बैर

पवित्रीकरण में हमारी वृद्धि का एक भाग है परमेश्वर की बातों की समझ में हमारी वृद्धि होना। दुर्भाग्यपूर्ण बात यह है कि मुझे एक ऐसे आन्दोलन के विषय में गम्भीर चिन्ता है जो कि मसीही जगत में तीव्रता से फैलता जा रहा है। मुझे ऐसा लगता है कि सिद्धान्त या ईश्वरविज्ञान के अध्ययन के प्रति व्यापक उदासीनता है और कभी-कभी बैर भी है। मैंने वास्तव में ऐसे कहते हुए सुना है कि कलीसिया में दो प्रकार के लोग होते हैं, वे लोग जो सोचते हैं कि ईश्वरविज्ञान महत्वपूर्ण है और दूसरे वे लोग जो इसे महत्वपूर्ण नहीं समझते हैं। परन्तु उसके साथ में जुड़ी हुई एक टिप्पणी होती थी—ऐसा कहा जाता

था कि जो लोग ईश्वरविज्ञान के विषय में चिन्ता करते हैं वे प्रेमी नहीं होते हैं और यह बात तो एक समस्या है क्योंकि परमेश्वर इस बात की अधिक चिन्ता करता है कि हम प्रेमी लोग हों इसके विपरीत कि हमें ईश्वरविज्ञान का ज्ञान हो।

जब मैंने ऐसा सुना तो मैं अत्यन्त व्यथित हुआ। निश्चय ही, मैंने सिद्धान्त के प्रति विद्वेष की अभिव्यक्तियाँ पहले सुनी थीं और मैं यह स्वीकार करता हूँ कि सिद्धान्त का अध्ययन मृतक शास्त्रसम्मतता *(orthodoxy)* की ओर ले जा सकता है और यह तो निश्चय ही ईश्वरभक्ती नहीं है। मैं यह सोचता हूँ कि हम सब जानते हैं कि एक बौद्धिक क्रिया के रूप में सिद्धान्त का अध्ययन करना तथा परमेश्वर एवं अन्य लोगों से प्रेम न करना सम्भव है। परन्तु यह तो एक अन्य बात है कि इस समस्या का सामान्यीकरण किया जाए और फिर यह निष्कर्ष निकाला जाए कि यदि हम मसीही ईश्वरविज्ञान का अध्ययन करते हैं, तो निश्चित् ही हम प्रेमी नहीं होंगे, तो इसलिए प्रेमी होने के लिए सबसे उत्तम उपाय है, ईश्वरविज्ञान से बचना। इस बात के निहितार्थों *(implications)* के विषय में सोचें। इस प्रकार के निष्कर्ष का अर्थ यह है कि प्रेमी होने का सबसे उत्तम उपाय यह है कि हम यथासम्भव परमेश्वर की बातों को समझने से बचें। ईश्वरविज्ञान का अध्ययन स्पष्ट रूप से परमेश्वर के चरित्र का अध्ययन है, जिसका सर्वोच्च गुण प्रेम है। खरा ईश्वरविज्ञान वास्तव में प्रेम के केन्द्रीय महत्व के विषय में शिक्षा देता है और हमें पवित्रशास्त्र के परमेश्वर से और अन्य लोगों से भी प्रेम करने की प्रेरणा देता है।

सिद्धान्त के प्रति इस प्रकार का विद्वेष प्रायः ईश्वरविज्ञानीय विवाद के सन्दर्भ में व्यक्त किया जाता है। ईश्वरविज्ञानीय विवादों के दोनों पक्षों की ओर के लोग बुरा व्यवहार कर सकते हैं। किन्तु कुछ तो सभी विवादों से कतराते हैं।

वे प्रायः कहते हैं कि "मैं इस विवाद के विषय में या सामान्य रीति से सिद्धान्त की चिन्ता नहीं करता हूँ, मेरा केवल यह मानना है कि हमें एक दूसरे के प्रति अधिक प्रेमी होने की आवश्यकता है।" परन्तु क्या यह प्रेम भरी बात होगी कि गम्भीर ईश्वरविज्ञानीय त्रुटि को निर्विरोध चलते रहने दिया जाए? क्या पौलुस प्रेमरहित था जब वह प्रतिदिन चौक में परमेश्वर की बातों के विषय में वाद-विवाद करता था (प्रेरितों के कार्य 17:17)? क्या यीशु प्रेमरहित था जब वह फरीसियों की शिक्षा का खण्डन करता था? क्या प्राचीन इस्राएल के नबी प्रेमरहित थे जब उन्होंने झूठे नबियों को डाँटा और फटकारा? क्या एलिय्याह प्रेमरहित था जब उसने बाल के नबियों के साथ वाद-विवाद किया (1 राजा 18)? मैं यह कल्पना नहीं कर सकता हूँ कि उस दिन किसी ने कर्म्मेल पर्वत पर भीड़ में से यह कहा: "यदि तुम चाहते हो तो तुम लोग एलिय्याह का अनुसरण कर सकते हो, परन्तु मैं नहीं करूँगा। हो सकता है कि सत्य उसके साथ है, परन्तु वह प्रेमी नहीं है। देखो उसने बाल के नबियों के साथ क्या किया है। यह कितना प्रेमरहित कार्य है!" परमेश्वर के सत्य के लिए संघर्ष करना तो एक प्रेमपूर्ण कार्य है, न कि प्रेम की अनुपस्थिति का प्रतीक। यदि हम परमेश्वर से प्रेम करते हैं, यदि हम ख्रीष्ट से प्रेम करते हैं, यदि हम कलीसिया से प्रेम करते हैं, तो हमें उस सत्य से प्रेम करना होगा जो कि मसीहियत के सारतत्व को ही परिभाषित करता है।

एक बार मैंने एक और विचलित करने वाली टिप्पणी सुनी: "मसीहियत सम्बन्धों के विषय में है, न कि प्रतिज्ञप्तियों *(propositions)* के विषय में है।" उक्त व्यक्ति ने फिर आगे चलकर यह भी कहा कि मसीहियत सत्य से सम्बन्ध रखती है, परन्तु मैं उन दो कथनों को एक साथ में नहीं रख पा रहा

था। यदि मसीही विश्वास प्रतिज्ञप्तियों के विषय में नहीं है, तो फिर वह किस प्रकार के सत्य के विषय में है? मेरा मानना है कि सामान्य रीति से संस्कृति में तथा विशेष रीति से कलीसिया पर अस्तित्ववाद *(existentialism)* के प्रभाव ने कुछ ऐसा उत्पन्न किया है जो कि पिछली पीढ़ियों में अज्ञात था: सम्बन्धपरक ईश्वरविज्ञान *(relational theology)*। साधारण रीति से कहा जाए तो सम्बन्धपरक ईश्वरविज्ञान एक ऐसी ईश्वरविज्ञानीय प्रणाली है जिसकी विषयवस्तु और अर्थ सम्बन्धों द्वारा निर्धारित होती है। यह सम्पूर्ण सापेक्षवाद *(relativism)* से केवल आधा ही पग दूर है। यह इस प्रकार का ईश्वरविज्ञान है जो कहता है कि यदि आप यह विश्वास करते हैं कि परमेश्वर एक है और मैं विश्वास करता हूँ कि परमेश्वर एक में तीन है, तो जो वास्तव में महत्वपूर्ण है वह है हमारा व्यक्तिगत सम्बन्ध। सत्य सम्बन्धों द्वारा निर्धारित किया जाता है, न कि प्रतिज्ञप्तियों के द्वारा। उदाहरण के लिए, यदि हम कहें कि यीशु क्रूस पर एक प्रायश्चित्त के रूप में मरा तथा कोई अन्य कहे कि उसकी मृत्यु प्रायश्चित्त हेतु नहीं थी, तो हम इस विषय पर चर्चा नहीं करेंगे कि कहीं हम अपने सम्बन्धों को तोड़ न दें। सम्बन्ध को संरक्षित रखना चाहिए भले ही सत्य की बलि देनी पड़े।

परमेश्वर को जानने का लक्ष्य

एमिल ब्रूनर, बीसवीं शताब्दी के स्विट्ज़रलैंड के ईश्वरविज्ञानी और नवशास्त्रसम्मत *(neoorthodox)* ईश्वरविज्ञान के पिताओं में से एक थे। उन्होंने एक छोटी पुस्तक लिखी जिसका शीर्षक था *सत्य एक आकस्मिक भेंट के रूप में (ट्रूथ ऐज़ एन्काउन्टर)*। उनकी अभिधारणा यह थी कि जब हम

परमेश्वर की बातों का अध्ययन करते हैं, तो हम सत्य को अमूर्त विचार के रूप में नहीं पढ़ते हैं। हम ईश्वरविज्ञान को मात्र इसलिए नहीं समझना चाहते हैं कि हम ईश्वरविज्ञान की परीक्षा में प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हो सकें। हम परमेश्वर के सिद्धान्त को समझना चाहते हैं जिससे कि हम परमेश्वर को समझ सकें, जिससे कि हम जीवित परमेश्वर से उसके वचन में भेंट कर सकें और उससे अपने व्यक्तिगत सम्बन्ध को घनिष्ट बना सकें। परन्तु हम किसी के साथ सम्बन्ध को घनिष्ट नहीं बना सकते हैं यदि हम उसके विषय में कुछ नहीं जानते हैं। इसलिए पवित्रशास्त्र की प्रतिज्ञप्तियाँ *(propositions)* स्वयं में गन्तव्य नहीं हैं किन्तु गन्तव्य तक पहुँचने का साधन हैं। किन्तु वे गन्तव्य तक पहुँचने का एक *आवश्यक* साधन हैं। इसलिए यह कहना एक अत्यधिक जोखिम भरा झूठा द्विभाजन होगा कि मसीहियत प्रतिज्ञप्तियों के विषय में नहीं है किन्तु सम्बन्धों के विषय में है। ऐसा करना सत्य के आत्मा को अपमानित करना है, जिसकी ये प्रतिज्ञप्तियाँ हैं। इन प्रतिज्ञप्तियों को तो हमारा मुख्य भोजन होना चाहिए क्योंकि ये मसीही जीवन को परिभाषित करती हैं।

कुछ समय पूर्व मैंने एक मसीही पत्रिका के सम्पादक को लिखे गए पत्रों में से कुछ को पढ़ा। उनमें से एक उन मसीही विद्वानों की अवहेलना करता है जिनके पास उच्च श्रेणी की डिग्रियाँ हैं। उस पत्र के लेखक ने दोष लगाया कि इस प्रकार के पुरुष ख्रीष्ट की शिक्षाओं के शब्द अध्ययनों को प्राचीन भाषाओं में करने में आनन्द उठाते हैं जिससे कि वे यह प्रदर्शित कर सकें कि उसने वास्तव में वह नहीं कहा जो कि हमारी अंग्रेज़ी की बाइबलों में प्रतीत होता है। यह तो स्पष्ट था कि परमेश्वर के वचन के लिए किसी भी गम्भीर अध्ययन के प्रति यह नकारात्मक व्यवहार था। यह सच है कि इस प्रकार के विद्वान पाए जाते हैं, जो कि एक शब्द को छह विभिन्न भाषाओं में अध्ययन करते हैं और

फिर भी उसके अर्थ को नहीं समझ पाते हैं, परन्तु इसका यह अर्थ तो नहीं है कि हमें परमेश्वर के वचन के लिए किसी भी प्रकार के गम्भीर अध्ययन में नहीं लगना चाहिए कि कहीं हम भी उन ग़ैर-ईश्वरभक्त विद्वानों के नाईं हो जाँए। एक अन्य पत्र के लेखक ने यह विचार प्रकट किया कि जो लोग सिद्धान्त के अध्ययन में सम्मिलित होते हैं वे इस संसार में लोगों के द्वारा अनुभव की जा रही पीड़ा की चिन्ता नहीं करते हैं। किन्तु मेरे अनुभव में पीड़ा को अनुभव करना और फिर सत्य के विषय में प्रश्न को न पूछना यथार्थ में असम्भव है। हम सब कष्ट के विषय में सत्य को जानना चाहते हैं और विशिष्ट रीति से हम यह जानना चाहते हैं कि हमारी पीड़ा के समय में परमेश्वर कहाँ पर है। यह एक ईश्वरविज्ञानीय चर्चा का विषय है। हमारे पास इसका उत्तर पवित्रशास्त्र से आता है, जो स्वयं परमेश्वर के मन को पवित्र आत्मा के कार्य के माध्यम से प्रकट करता है, जिसको सत्य का आत्मा कहा जाता है। हम निश्चय ही परमेश्वर से प्रेम नहीं कर सकते यदि हम उसके सत्य से प्रेम नहीं करते हैं।

यह मेरे लिए यह बड़ी दुख की बात है कि आज के परिष्कृत *(sophisticated)* पाश्चात्य संस्कृति में लोग राशिचक्र के बारह चिन्हों से अधिक परिचित हैं न कि इस्राएल के बारह गोत्रों से या फिर बारह प्रेरितों से। हमारा जगत अपने आप को परिष्कृत और प्रौद्योगिकीय *(technological)* देखना चाहता है, परन्तु अभी भी अन्धविश्वास से भरा हुआ है। मसीही लोग भी इससे उन्मुक्त नहीं है। हम भी हमारे परिवेश में हेरफेर करने की सामर्थ्य के लिए इस नये-युगीन अभिलाषा के सामने पराजित हो सकते हैं। हमें उतनी सीमा तक जाने की आवश्यकता नहीं है कि हम उन मूर्खतापूर्ण विचार को ग्रहण करें कि सितारों के पथ हमारा गन्तव्य, हमारी समृद्धि, हमारी

उपलब्धियाँ और हमारी सफलताओं को निर्धारित करते हैं। किन्तु जब हम अपनी भावनाओं और झुकावों को पवित्र आत्मा के अगुवाई के साथ ठीक समान ठहराते हैं तो यह बात उतनी ही अन्धविश्वासपूर्ण होती है। परमेश्वर के वचनों में यत्नपूर्वक अनुशासन के साथ दक्षता को प्राप्त करने के विपरीत पवित्र आत्मा की अगुवाई के प्रति एक स्वछन्द खुलेपन में जीना अधिक रोमांचकारी प्रतीत होता है। किन्तु यह तो अत्यन्त जोखिमपूर्ण स्थान है। यदि हम पिता की इच्छा को पूर्ण करना चाहते हैं, तो हमें पिता के वचन को पढ़ना होगा—और जादू को ज्योतिषियों के लिए छोड़ना होगा।

अध्याय पाँच

अभिषेककर्ता

The Anointer

सम्पूर्ण पुराने नियम में, पवित्र आत्मा की उपस्थिति अल्पकालिक है। समय-समय पर उसका वर्णन दिखाई देता है, परन्तु उसकी सेवकाई का विस्तार से कभी भी वर्णन नहीं होता है। एक भूमिका जो वह नियमित रीति से निभाता है वह है इस्राएल के अगुवों को परमेश्वर द्वारा दिये गये उनके कार्यों को करने के लिए सक्षम बनाना। ये वे अगुवे थे जिनको कि नबी, याजक और राजा के "अभिषिक्त" कार्य दिये गये थे। आत्मा इनके ऊपर उतरता था, यद्यपि उनके साथ उसकी उपस्थिति प्रायः अस्थायी होती थी; उसने उन्हें विशिष्ट कार्यों के लिए सशक्त बनाने हेतु अभिषिक्त किया।

पुराने नियम में आत्मा द्वारा अगुवों को अभिषेक किये जाने के अनेक उदाहरण हैं: "यहोवा का आत्मा उस [ओत्नीएल] पर उतरा और वह

इस्राएलियों का न्यायी बना” (न्यायियों 3:10); “तब यहोवा का आत्मा यिप्तह में समा गया (11:29); परमेश्वर का आत्मा शाऊल पर सामर्थ्य से उतरा” (1 शमुएल 11:6); “तब शमूएल ने तेल भरा सींग लेकर उसके भाइयों के बीच में उसका अभिषेक किया। उसी दिन से यहोवा का आत्मा दाऊद पर बल से उतरता रहा” (16:13)। इसी प्रकार से, हम नबियों पर ठहरते हुए आत्मा के उदाहरणों को देखते हैं जब उन्होंने परमेश्वर की ओर से बोलने के लिए बुलाहट को प्राप्त किया (1 राजा 17:2; यिर्मयाह 1:4)। और आत्मा द्वारा नबियों के अभिषेक को तेल के अभिषेक द्वारा चित्रित किया गया है (निर्गमन 29:21)। किन्तु एक बार पुनः यह उदाहरण दर्शाते हैं कि सेवा के लिए आत्मा का अभिषेक सीमित था। परन्तु पुराने नियम ने यह संकेत दिया था कि एक दिन आत्मा के अभिषेक का कार्य और वृहद एवं स्थायी होगा।

इनमें से एक संकेत गिनती की पुस्तक में पाया जाता है। हम वहाँ पढ़ते हैं:

> और जो मिली-जुली भीड़ उनके साथ थी उसमें लालसा भड़क उठी और इस्राएली फिर रोने लगे और कहने लगे कि हमें मांस खाने को कौन देगा? हमें मिस्र की वे मछलियाँ याद हैं जो हम मुफ्त में खाया करते थे और खीरे और तरबूज और गन्दने और प्याज और लहसुन भी, परन्तु अब तो हमारा जी ऊब गया है, मन्ना के सिवाय हमें यहाँ और कुछ दिखाई नहीं देता। मन्ना तो धनिए के बीज के समान था और उसका रूप मोती

> के समान। लोग इधर-उधर जाकर उसे बटोरते और चक्की में पीसते थे अथवा ओखली में कूटकर तसले में उबालते और रोटियाँ बनाते थे, और उसका स्वाद तेल में तली हुई रोटी के समान था। जब रात में छावनी में ओस गिरती थी, तब मन्ना भी उसके साथ गिरता था। (11:4–9)

मुझे यहाँ पर इस दृश्य का वर्णन करने की अनुमति दें। परमेश्वर ने इस्राएल को मिस्र की बन्धुवाई से छुड़ाया। और जब वह उनकी अगुवाई जंगल से प्रतिज्ञा की भूमि की ओर कर रहा था, उसने उनके प्रतिदिन की आवश्यकताओं की चिन्ता की तथा मन्ना के रूप में स्वर्ग से उन्हें आश्चर्यजनक प्रावधान दिया। आरम्भ में तो इस्राएल के लोग अपनी स्वतन्त्रता और उस प्रावधान के दयापूर्ण हाथ के कारण आनन्दित हुए जिसने उन्हें प्रतिदिन खाने के लिए भोजन दिया। परन्तु शीघ्र ही वे असन्तुष्ट हो गए। वे उन कोड़ों, यातना, पसीने, बन्धुवाई के दरिद्रता के विषय में भूल गए; और अब उनके सबसे प्रिय सपने मछली, खीरे, खरबूजे, हरी प्याज, प्याज, और लहसुन से भरे हुए थे जिन्हें उन्होंने मिस्र में खाया था। वे इस बात से अप्रसन्न थे कि उन्हें उसी वस्तु को अर्थात् मन्ना को प्रत्येक भोजन के समय खाना पड़ रहा था। जब मैं उनकी असन्तुष्टि के विषय में पढ़ता हूँ तो मैं अपने आप को हँसने से नहीं रोक पाता हूँ। वास्तव में घास सर्वदा दूसरी ओर अधिक हरी होती है, कम से कम ऐसा तो हम मान कर चलते ही हैं।

और गिनती की पुस्तक में जब वृतान्त आगे बढ़ता है, तो हम पढ़ते हैं कि “तब मूसा ने हर एक परिवार के लोगों को अपने अपने डेरे के द्वार पर रोते हुए सुना, और यहोवा का क्रोध अत्यन्त भड़क उठा, और मूसा को भी यह बुरा लगा” (पद 10)। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक जन इस समय अप्रसन्न था। किन्तु मूसा की स्थिति में बात कुछ और भी अधिक थी। वह तो आपे से बाहर क्रोधित हो गया था:

> तब मूसा ने यहोवा से कहा, “तू अपने दास पर क्यों इतना कठोर हो गया है? मैंने तेरी दृष्टि में क्यों अनुग्रह नहीं पाया जो तूने इस सारी प्रजा का बोझ मुझ पर लाद दिया है? क्या ये मेरे गर्भ में थे? क्या मैंने ही उनको उत्पन्न किया, जो तू कहता है कि जैसे धाय दूध पीते बालक को अपनी गोद में लिए फिरती है, वैसे ही मैं इन लोगों को अपनी गोद में लेकर उस देश में पहुँचाऊँ जिसे देने की शपथ तू ने उनके पूर्वजों से खाई है? इन सब लोगों को खिलाने के लिए मुझे इतना माँस कहाँ से मिलेगा? क्योंकि वे मेरे समक्ष रो रोकर कहते हैं, ‘हमें माँस खाने को दे!’ मैं अकेला इन सब लोगों को नहीं सम्भाल सकता, क्योंकि यह बोझ मेरे लिए बहुत भारी है। यदि तू मुझ से ऐसा ही व्यवहार करना चाहता है और यदि तेरा अनुग्रह मुझ पर हो तो मुझे शीघ्र ही मार डाल, जिस से कि मैं अपनी दुर्दशा देख न पाऊँ” (11–15)।

हम मूसा की हताशा की गहराई को उसकी हताशापूर्ण प्रार्थना के शब्दों के द्वारा देख सकते हैं जो उसने उस अवसर पर की थी: “परमेश्वर, यदि आप

मुझे थोड़ा भी प्रिय समझते हैं, यदि आप मेरी थोड़ी सी भी चिन्ता करते हैं, अभी इसी समय मेरा घात कर दीजिए क्योंकि अब मैं इसका सामना नहीं कर सकता हूँ।" उस समय उसके ऊपर सहस्रों लोग वह प्राप्त करने के लिए चिल्ला रहे थे, जो किसी भी रीति से उसके लिए उन्हें उपलब्ध कराना सम्भव नहीं था। उस क्षण उसके लिए इस्राएलियों की अगुवाई को करते रहने की अपेक्षा मृत्यु अधिक उपयुक्त प्रतीत हो रही थी।

परमेश्वर का प्रतिउत्तर वह नहीं था जिसकी मूसा ने आशा की थी:

> तब यहोवा ने मूसा से कहा, "इस्राएली प्राचीनों में से मेरे लिए सत्तर पुरुष जिनको तू जानता है कि वे प्रजा के प्राचीन और अगुवे हैं, इकट्ठा कर और उन्हें मिलापवाले तम्बू के पास ले आ और वे तेरे साथ वहीं खड़े हों। तब मैं उतरकर वहाँ तुझ से बात करूँगा और जो आत्मा तुझ में है उसमें से कुछ लेकर उनमें डाल दूँगा, और वे तेरे साथ लोगों का बोझ उठाएँगे जिससे कि तुझे अकेले ही उठाना न पड़े। और इन लोगों से कह, 'अपने आपको कल के लिए पवित्र करो और तुम्हें माँस खाने को मिलेगा, क्योंकि तुम यह कहकर यहोवा के सुनते हुए रोए हो कि "हमें माँस खाने को कौन देगा, क्योंकि हम तो मिस्र ही में भले थे।" इसलिए यहोवा तुमको माँस देगा और तुम खाओगे। तुम एक या दो दिन, या पाँच या दस या बीस दिन ही नहीं, वरन् महीने भर खाते रहोगे, जब तक वह तुम्हारे नथनों से निकलने न लगे और तुम उस से घृणा न करने लगो, क्योंकि तुमने यहोवा का तिरस्कार किया है जो तुम्हारे मध्य में है और

> उसके सुनते हुए रो रोकर यह कहा है कि "हमने क्यों मिस्र देश को छोड़ दिया"'" (पद 16–20)

मेरा मानना है कि जो सीख यहाँ पर है वह यह है: सावधान रहो कि तुम किस बात के लिए प्रार्थना करते हो। वे लोग माँस के लिए रो रहे थे तो परमेश्वर ने कहा: "ठीक है, यदि तुमको माँस चाहिए, तो मैं तुमको माँस दूँगा। मैं तुमको सुबह के नाश्ते के लिए माँस, दोपहर के भोजन के लिए माँस, रात्रि के भोजन के लिए माँस और मध्यरात्रि के अल्पाहार के लिए माँस दूँगा, न केवल एक या दो दिनों के लिए परन्तु सम्पूर्ण माह के लिए दूँगा, जब तक कि वह तुम्हारी नाक में से न निकलने लगे।" परमेश्वर ने कहा कि वह उनको तब तक माँस देगा जब तक कि वे उसको देखना भी सहन न कर पाएँ।

होना तो यह चाहिए था कि इस सन्देश को सुनकर मूसा को चिन्तामुक्त हो जाना चाहिए था। परमेश्वर लोगों को वह देने जा रहा था जो वे चाहते थे, और मूसा के ऊपर से दबाव को हटाया जा रहा था। मूसा के लिए यह कहना तर्कसंगत होता: "धन्यवाद प्रभु, इस स्थिति पर नियन्त्रण करने के लिए। मैं आपका बहुत आभारी हूँ।" परन्तु ऐसा नहीं हुआ। इसके विपरीत, मूसा के विश्वास में एक संकट आया। उसने परमेश्वर से कहा: "जिन लोगों के मध्य मैं रहता हूँ उनमें छः लाख तो प्यादे ही हैं और फिर भी तूने कहा है कि मैं उन्हें इतना माँस दूँगा कि वे महीने भर खाते रहेंगे। क्या उनके लिए भेड़-बकरियों और गाय-बैलों के झुण्ड काटे जाएँ कि उनके लिए पर्याप्त हो? अथवा समुद्र

की सारी मछलियाँ उनके लिए इकट्ठी की जाएँ कि उनके लिए पर्याप्त हों? ” (पद 21–22)।

जब मूसा ने छः लाख प्यादों के विषय में बात की तो वह इस्राएल की सेना की गिनती को सन्दर्भित कर रहा था, वे पुरुष जो कि युद्ध के लिए तत्पर थे। इस संख्या में जवान लड़के, बच्चे, वृद्ध लोग, दुर्बल लोग और महिलाएँ सम्मिलित नहीं थीं। वह तो सम्भवतः 20 लाख से भी कहीं अधिक लोगों के लिए उत्तरदायी था। मूसा यह नहीं देख पा रहा था कि परमेश्वर किस रीति से लोगों के इस विशाल समूह को महीने भर माँस खिलाने की अपनी प्रतिज्ञाओं को पूर्ण कर पाएगा।

मुझे परमेश्वर का प्रतिउत्तर भाता है: “तब यहोवा ने मूसा से कहा, “क्या यहोवा का हाथ छोटा हो गया है? अब तू देखेगा कि जो मैंने तुझ से कहा है वह पूरा होता है या नहीं” (पद 23)। मूलतः परमेश्वर ने मूसा से पूछा, “क्या मैं परमेश्वर हूँ या मैं परमेश्वर नहीं हूँ?” फिर उसने मूसा को चुनौती दी कि वह केवल निहारे और देखे कि परमेश्वर क्या करेगा।

यह सुनने पर मूसा ने कुछ और नहीं कहा। उसने केवल वही किया जो परमेश्वर ने उसे आज्ञा दी थी: “तब मूसा ने बाहर जाकर सब लोगों को यहोवा की बातें सुना दीं, और उसने प्रजा के प्राचीनों में से सत्तर पुरुषों को भी इकट्ठा किया और उन्हें तम्बू के चारों ओर खड़ा कर दिया। तब यहोवा बादल में होकर उतरा और उस से बोला, और उस आत्मा में से जो मूसा पर था कुछ लेकर उन सत्तर प्राचीनों पर डाल दिया, और ऐसा हुआ कि जब आत्मा उनमें समाया तब वे नबूवत करने लगे, पर उसके पश्चात् में उन्होंने फिर कभी नबूवत नहीं की” (पद 24–25)।

मूसा के सहायक

जब हम इस महत्वपूर्ण घटना का अध्ययन करते हैं, तो इससे पूर्व की एक घटना पर ध्यान देना लाभदायक होगा जिसको कि निर्गमन 18 में अभिलेखित किया गया है। हमको बताया गया है कि परमेश्वर के द्वारा इस्राएल के लोगों को मिस्र से बाहर निकालने के पश्चात् मूसा का ससुर यित्रो, मिद्यान का याजक उससे भेंट करने के लिए सिनै पर इस्राएली छावनी में आया। अपनी भेंट के समय यित्रो ने देखा कि मूसा सवेरे से लेकर सन्ध्या तक लोगों के मध्य में विवादों का समाधान करने के लिए बैठा रहता था (पद 1–13)।

फिर हम पढ़ते हैं:

> जब मूसा के ससुर ने देखा कि वह लोगों के लिए क्या-क्या करता है तो उसने कहा, "यह क्या है जो तू लोगों के लिए करता है, तू न्याय करने अकेला क्यों बैठता है, और भोर से सन्ध्या तक लोग तेरे आस-पास खड़े रहते हैं?" तब मूसा ने अपने ससुर को बताया, "क्योंकि लोग मेरे पास परमेश्वर से पूछने आते हैं। जब भी उनमें कोई मुकद्दमा होता है वे मेरे पास आते हैं। मैं उनके बीच न्याय करता हूँ और परमेश्वर की विधियाँ और व्यवस्था उन्हें बतलाता हूँ।" तब मूसा के ससुर ने उससे कहा, "जो काम तू करता है वह अच्छा नहीं। इस से तू और तेरे साथ के ये सब लोग थक जाएँगे, क्योंकि यह कार्य तेरे लिए बहुत भारी है। तू

अकेला इसे नहीं कर सकता। अब मेरी सुन, मैं तुझे सम्मति दूँगा और परमेश्वर तेरे संग रहे। तू परमेश्वर के सम्मुख इन लोगों का प्रतिनिधि बन और इनके मुकद्दमों को परमेश्वर के पास पहुँचाया कर। और उन्हें विधि और व्यवस्था सिखाया कर और जिस जिस मार्ग पर उन्हें चलना है और जिस जिस कार्य को उन्हें करना है उसे उनको बतला दिया कर। फिर तू इनमें से ऐसे ऐसे लोग छाँट ले जो गुणी, परमेश्वर का भय मानने वाले, सच्चे और अन्याय के लाभ से घृणा करने वाले हों और तू इन लोगों को सहस्त्र सहस्त्र, सौ सौ, पचास पचास और दस दस मनुष्यों पर प्रधान नियुक्त कर दे। और वे इन लोगों का न्याय सब समय किया करें और बड़े मुकद्दमों को तो वे तेरे पास लाएँ और छोटे झगड़ों का न्याय वे आप ही किया करें, तब यह तेरे लिए सरल होगा और वे इस बोझ को तेरे साथ उठाएँगे। यदि तू ऐसा करे और परमेश्वर तुझे ऐसी आज्ञा दे तब तू इसे सह सकेगा और ये सब लोग अपने अपने स्थान पर कुशल से पहुँचेंगे।" अतः मूसा ने अपने ससुर की बात मानी और जो कुछ उसने कहा था वह सब किया। और मूसा ने सम्पूर्ण इस्राएल में से योग्य पुरुषों को चुन लिया और उन्हें सहस्त्र सहस्त्र, सौ सौ, पचास पचास और दस दस लोगों पर प्रधान ठहराया। और वे सब समय लोगों का न्याय करते थे, जो मुकद्दमा कठिन होता था उसे तो वे मूसा के पास लाते थे, परन्तु सब छोटे मुकद्दमों का निर्णय वे स्वयं किया करते थे। (पद 14–26)

मूसा ने यित्रो की सलाह को माना और अपने अधीन पुरुषों को न्यायी का कार्य करने के लिए नियुक्त किया, यद्यपि वह "मुख्य न्यायधीश" के रूप में कार्य करता था और सबसे जटिल मुकद्दमों को सुनता था।

गिनती के विवरण में भी परमेश्वर ने कुछ ऐसा ही किया था। परमेश्वर ने मूसा से कहा कि वह सत्तर पुरुषों को इकत्रित करे जो कि लोगों के प्राचीन थे और उन्हें मिलापवाले तम्बू के निकट लाए (11:16)। परमेश्वर कह रहा था कि: "मैं अगुवाई के बोझ को तेरे ऊपर से घटा दूँगा। मैं तुझे एक नहीं परन्तु सत्तर सहायक देने पर हूँ।" जब वे इकत्रित हुए तो परमेश्वर ने वह आत्मा जो मूसा पर था उसमें से थोड़ा सा लेकर उन सत्तर अगुवों पर उण्डेल दिया। इसके परिणामस्वरूप छावनी में अब केवल एक ही अभिषिक्त अगुवा नहीं था, वहाँ इकत्तर अगुवे थे।

मूसा को पवित्र आत्मा द्वारा पुरानी वाचा के मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए अभिषिक्त किया गया था। अब परमेश्वर ने सत्तर और लोगों को इस कार्य में सहभागी होने के लिए नियुक्त किया। यह ध्यान देने योग्य बात है कि परमेश्वर ने उनको उनके स्वयं का अभिषेक नहीं दिया; किन्तु उसके विपरीत जो आत्मा मूसा के ऊपर था उसने उसको उन सत्तर अगुवों में बाँट दिया। जब उसने ऐसा किया तो वे सब एक अनोखे रीति से नबूबत करने लगे, एक ऐसे ढ़ंग से जैसा कि उन्होंने पहले कभी नहीं किया था और न ही कभी उसके पश्चात् किया। इस बाहरी प्रकटीकरण ने दिखाया कि वे पवित्र आत्मा के द्वारा सशक्त किये गये थे।

और फिर हम इसको लगभग एक पाद-टिप्पणी *(footnote)* के नाईं ही पढ़ते हैं: परन्तु दो पुरुष छावनी में ही रह गए थे। उनमें से एक का नाम

एलदाद और दूसरे का मेदाद था और आत्मा उनमें भी समाया—ये तो उनमें से थे जिनके नाम लिख लिए गए थे परन्तु वे तम्बू के पास नहीं गए थे—और वे छावनी में ही नबूवत करने लगे। तब एक जवान ने मूसा के पास दौड़कर उसे बताया, "एलदाद और मेदाद छावनी में नबूवत कर रहे हैं" (गिनती 11: 26–27)। यह तो अत्यन्त ही चौंका देने वाली बात थी। लोगों को अभी तक यह नहीं ज्ञात था कि परमेश्वर ने मूसा के अतिरिक्त सत्तर प्रचीनों पर भी पवित्र आत्मा के वितरण की आज्ञा दी थी। जब उन्होंने देखा कि एलदाद और मेदाद नबूवत कर रहे हैं, तो वे भयातुर हुए कि यह एक झूठे नबी के होने का संकेत हो सकता है। तो वे भाग कर मूसा को इसकी जानकारी देते हैं।

जब यह सन्देश मूसा के पास पहुँचा, तो उसका सहायक यहोशू विशेष रीति से अप्रसन्न हुआ: "तब नून के पुत्र यहोशू ने जो युवावस्था से मूसा का सेवक था, मूसा से कहा, 'हे स्वामी मूसा, उन्हें रोक दे।'" यहोशू ने यह अनुरोध क्यों किया? क्या वह नबूबत के विरोध में था? क्या वह पवित्र आत्मा के सामर्थ्य के विरोध में था? नहीं, यहोशू को केवल इस बात की चिन्ता थी कि यह मूसा की अगुवाई पर एक संकट था। उसने इसे पुराने नियम की कलीसिया की उचित रीति से निर्धारित अधिकार के प्रति विद्रोह के एक प्रयत्न के रूप में देखा।

पवित्र आत्मा के कार्य के प्रति हमारी समझ के लिए मूसा का प्रतिउत्तर महत्वपूर्ण है। हम पढ़ते हैं: "पर मूसा ने उस से कहा, 'क्या तुझे मेरे कारण जलन होती है? अच्छा होता कि यहोवा की सारी प्रजा के लोग नबी होते और यहोवा अपना आत्मा उन में डाल देता'" (पद 29)। यद्यपि यहोशू ने परमेश्वर

के लोगों को सेवा हेतु सबल बनाने के लिए पवित्र आत्मा के अभिषेक के कार्य के विस्तार का विरोध किया, परन्तु मूसा उसमें मगन हुआ। उसने यह भी इच्छा व्यक्त की कि परमेश्वर अपने आत्मा को अपने प्रत्येक जन पर उण्डेल दे।

प्राचीन इस्राएल में मूसा के समयकाल में यह विचार कि आत्मा प्रत्येक विश्वासी पर ठहरेगा, मात्र एक आशा थी या फिर मूसा के होठों पर एक प्रार्थना थी। आगे चलकर यद्यपि यह आशा एक नबूबत बन गयी। योएल नबी ने लिखा: "और इसके बाद मैं सब लोगों पर अपना आत्मा उण्डेलूँगा। तुम्हारे पुत्र और पुत्रियाँ नबूवत करेंगी। तुम्हारे वृद्ध जन स्वप्न देखेंगे और तुम्हारे जवान दर्शन देखेंगे। मैं अपने दासों और दासियों पर भी उन दिनों में अपना आत्मा उण्डेलूँगा" (2:28–29)। योएल ने आत्मा के प्रेरणा के अधीन कहा कि अन्तिम दिनों में परमेश्वर अपना आत्मा "सब लोगों" पर उण्डेल देगा, अर्थात् परमेश्वर के सब लोगों पर। सेवा के लिए पवित्र आत्मा द्वारा सबल बनाया जाना केवल कुछ पृथक लोगों तक या एक विशेष छोटे समूह तक ही सीमित नहीं रहेगा, परन्तु परमेश्वर की संगति में प्रत्येक व्यक्ति को यह प्रदान किया जाएगा।

प्रार्थना और नबूबत का परिपूर्ण होना

जो मूसा के लिए एक प्रार्थना और योएल के लिए एक नबूबत थी वह पिन्तेकुस्त के दिन एक ऐतिहासिक वास्तविकता बन गई, जब परमेश्वर ने उस आत्मा को

लिया जो यीशु के ऊपर था, जो कि नई वाचा का मध्यस्थ था और उस आत्मा को न केवल सत्तर परन्तु सब विश्वासियों में बाँट दिया।

यीशु ने शिष्यों को पहले ही बता दिया था कि यह घटना घटेगी। प्रेरितों के कार्य की पुस्तक में लूका लिखता है: "उसने उन्हें एकत्रित करके आज्ञा दी, यरूशलेम को न छोड़ना, वरन् पिता की उस प्रतिज्ञा के पूर्ण होने की प्रतीक्षा करना, 'जिसे तुमने मुझ से सुना है। यूहन्ना ने तो जल से बपतिस्मा दिया, परन्तु अब से थोड़े दिनों के पश्चात् तुम पवित्र आत्मा से बपतिस्मा पाओगे'" (1:4–5)। इससे पहले कि यीशु अपने पिता के पास आरोहित हो जाता उसने एक अन्तिम बात जो अपने शिष्यों से कही थी उनमें से एक यह थी कि उन्हें कुछ समय के लिए यरूशलेम में रूके रहना था जिससे कि वे पिता द्वारा किए गए प्रतिज्ञा की परिपूर्णता को प्राप्त कर सकें। वह योएल की नबूबत में पवित्र आत्मा के बपतिस्मा की प्रतिज्ञा की ओर संकेत कर रहा था। उसने उन्हें बताया कि यह घटना अति निकट भविष्य में घटित होगी।

लूका आगे कहता है: "अतः जब वे एकत्रित हुए, तो वे उस से पूछने लगे, 'प्रभु, क्या तू इसी समय इस्राएल के राज्य को पुनः स्थापित कर देगा?' उसने उनसे कहा, 'उन समयों अथवा कालों का जानना जिन्हें पिता ने निर्धारित किया है, तुम्हारा काम नहीं। परन्तु जब पवित्र आत्मा तुम पर आएगा तब तुम सामर्थ्य पाओगे और यरूशलेम, सारे यहूदिया और सामरिया में, यहाँ तक कि

पृथ्वी के छोर तक तुम मेरे साक्षी होगे'" (6–8)। यहाँ पर यीशु ने आत्मा के बपतिस्मा को उसके साक्षी होने की सामर्थ्य के साथ सम्बद्ध किया।

इन सारे खण्डों में जिनकी हमने चर्चा की है—गिनती 11, योएल 2 और विशेष रीति से यहाँ प्रेरितों के कार्य 1 में—पवित्र आत्मा का अभिषेक किसी प्रकार सामर्थ्य के प्रदान किये जाने से जुड़ा है, अर्थात् किसी अनुग्रहमयी ईश्वरीय दान से। इस प्रकार के दान के लिए जिस यूनानी शब्द का उपयोग किया गया है वह *करिसमा-charisma* है। इसलिए आत्मा जिन दानों को देता है उन्हें कैरिस्मैटिक-"*charismatic*" दान या फिर *कैरिस्माटा-charismata* के रूप में जाना जाता है। आत्मा ये दान ख्रीष्ट की कलीसिया में परमेश्वर के लोगों को ख्रीष्ट के द्वारा दिये गये उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए अर्थात् सबल बनाने के लिए देता है—पृथ्वी के कोनों तक उसके निमित्त साक्षी देने के लिए।

तो यह थी वह प्रतिज्ञा। पिन्तेकुस्त के दिन, आत्मा वास्तव में शिष्यों के ऊपर सामर्थ के साथ आया:

> जब पिन्तेकुस्त का दिन आया, तो वे सब एक स्थान पर एकत्रित थे। एकाएक आकाश से एक प्रचण्ड आँधी की सी सनसनाहट का शब्द हुआ, और उस से सारा घर, जहाँ वे बैठे हुए थे, गूँज गया। और उन्हें आग के समान जीभें विभाजित होती हुई दिखाई दीं, और उनमें से प्रत्येक पर आ ठहरीं। वे सब पवित्र आत्मा से भर गए, और जैसे आत्मा ने उन्हें बोलने की सामर्थ्य दी वे अन्य-अन्य भाषाओं में बोलने लगे। यरूशलेम में यहूदी रहा करते थे, अर्थात् वे भक्त जो आकाश के नीचे स्थित प्रत्येक देश से आए थे। जब यह शब्द हुआ तो भीड़ लग गई और

> लोग भौचक्के हो गए, क्योंकि प्रत्येक ने उनको अपनी ही भाषा में बोलते सुना। वे आश्चर्यचकित और विस्मित होकर कहने लगे, "ये सब जो बोल रहे हैं क्या गलीली नहीं? तब यह कैसी बात है कि हम में से प्रत्येक अपनी ही मातृ-भाषा में उन्हें बोलते हुए सुनता है? पारथी, मेदी, एलामी और मेसोपोटामिया, यहूदिया और कप्पूदूकिया और पुन्तुस और एशिया, फ्रूगिया, पंफूलिया, मिस्र और लिबिया के प्रदेश जो कुरेने के आस-पास हैं, और रोमी प्रवासी अर्थात् यहूदी और यहूदी मत अपनाने वाले, क्रेती और अरब निवासी—हम अपनी-अपनी भाषा में इनसे परमेश्वर के सामर्थी कार्यों की चर्चा सुनते हैं।"" (प्रेरितों 2:1–11)

पिन्तेकुस्त एक वार्षिक पर्व था जो कि यरूशलेम में मनाया जाता था। यहूदी तीर्थ-यात्रीगण पिन्तेकुस्त के पर्व के लिए सम्पूर्ण जगत से यरूशलेम आते थे। और वहाँ पर अनेक क्षेत्रों से आए विभिन्न भाषाएँ बोलने वाले यहूदियों की एक विशाल मण्डली थी। परन्तु वह पर्व एक अलौकिक घटना के द्वारा बाधित हुआ जो कि पवित्र आत्मा के दृश्य प्रकटीकरण द्वारा चिन्हित था—आग की जीभें जो कि शिष्यों के सिरों पर आकर ठहरीं—और एक श्रव्य (सुनाई देने वाला) प्रकटीकरण—उन शिष्यों ने प्रत्येक उपस्थित लोगों की भाषाओं में "परमेश्वर के सामर्थी कार्यों" के विषय में बातें किया।

आत्मा के उस अभिषेक के पश्चात् ये शिष्य परिवर्तित पुरुष थे। वे प्रचार करने लगे कि यीशु ही ख्रीष्ट और उद्धारकर्ता है, तथा मृत्युदण्ड की धमकियों से भी वे शान्त नहीं हुए। शीघ्र ही वे सुसमाचार के सन्देश को प्रत्येक स्थान पर

ले जाने लगे, जैसा कि यीशु ने उन्हें आज्ञा दी थी और शीघ्र ही उनके विषय में कहा गया कि उन्होंने "संसार में उथल-पुथल मचा दी है" (प्रेरितों 17:6)। अभिषेक की सामर्थ्य ऐसी ही सामर्थ्य है जिसे आत्मा उस प्रत्येक जन को देता है जो नई वाचा के अन्तर्गत यीशु ख्रीष्ट पर भरोसा करता है।

सोलहवीं शताब्दी के एक महान सुधारक मार्टिन लूथर ने "प्रत्येक विश्वासियों के याजकपन" के विषय में बात की थी। कुछ लोग इस बात का यह अर्थ सोचते हैं कि कलीसिया में अगुवों और सदस्यों में कोई भिन्नता नहीं होनी चाहिए, परन्तु लूथर का यह तात्पर्य नहीं था। वह कह रहा था कि परमेश्वर के राज्य का कार्य केवल उन्हीं को नहीं दिया जाता है जिनकी आजिविका एक प्रचारक, शिक्षक, डीकन या एल्डर की होती है। इसके विपरीत, प्रत्येक मसीही को ख्रीष्ट की सेवा और कलीसिया की सेवा में भाग लेने के लिए बुलाहट दी गई है। यह बात भयभीत करने वाली हो सकती है परन्तु उस बुलाहट के साथ पवित्र आत्मा का दान भी आता है, जो कि ख्रीष्ट के सभी लोगों को उसकी सेवा करने के लिए अभिषिक्त करता है और सबल बनाता है।

अध्याय छह

प्रदीपक

The Illuminator

अपने अकादमिक कार्यकाल के प्रथम वर्ष में, मैं पश्चिमी पेंसिल्वेनिया के एक महाविद्यालय में शिक्षण कार्य कर रहा था। बसन्त सत्र में, एक छात्रा ने मुझ से एक व्यक्तिगत समस्या की चर्चा करने के लिए भेंट करने का समय लिया। वह अत्यन्त व्यथित थी क्योंकि वह उस बात का अनुभव कर रही थी जिसे कभी कभी "ज्येष्ठता" *(senioritis)* कहा जाता है। वह अन्तिम वर्ष के अन्तिम सत्र में थी, वह अविवाहित थी, उसका किसी से प्रेम सम्बन्ध नहीं था और उस समय उसका किसी भी पुरुष के साथ विवाह की सम्भावना नहीं थी। वह एक श्रद्धापूर्ण और सत्यनिष्ठ मसीही थी, तो वह जानना चाहती थी कि क्या किसी जीवनसाथी को पाने के लिए प्रार्थना करना उसके लिए अनुचित होगा या उचित। मैंने उससे कहा कि परमेश्वर से यह प्रार्थना

करने में कुछ भी अनुचित नहीं है कि वह उसे एक पति प्रदान करे, और मैंने उससे आग्रह किया कि उसे ऐसा करना भी चाहिए।

लगभग दो सप्ताह उपरान्त वह पुनः मुझ से भेंट करने के लिए आई और इस बार वह आनन्द और उल्लास से भरी हुई थी। उसने कहा, "मैं दो सप्ताह से प्रार्थना कर रही थी कि परमेश्वर मुझे एक पति प्रदान करे और उसने मेरी प्रार्थनाओं का उत्तर प्रदान किया।" मैंने कहा, "क्या आपकी किसी से भेंट हुई है?" उसने कहा: "नहीं, मैं अभी तक उससे नहीं मिली हूँ। परन्तु मैं जानती हूँ कि मैं शीघ्र ही उससे मिलूँगी। देखिए पिछली रात मैंने भाग्यपूर्ण डुबकी *(lucky dipping)* लगायी।" मैंने आजतक "भाग्यपूर्ण डुबकी" जैसी किसी वस्तु के विषय में नहीं सुना था, तो मैंने उससे पूछा कि उससे उसका क्या तात्पर्य है। उसने कहा: "मैं प्रार्थना कर रही थी और बाइबल मेरे सामने खुली हुई थी, और मैंने परमेश्वर से पूछा कि क्या वह मुझको एक पति प्रदान करेगा। तब मैंने अपनी आँखें बन्द करके बाइबल को यूँ ही खोला, और अपनी अँगुली को एक पन्ने पर रख दिया। और जब मैंने अपनी आँखें खोलीं, तो मेरी अँगुली ज़कर्याह 9:9 की ओर इंगित कर रही थी जो कहता है: 'हे सिय्योन की पुत्री, अति आनन्दित हो, हे यरूशलेम की पुत्री जयजयकार कर! देख, तेरा राजा तेरे पास आता है, वह धार्मिकता और उद्धार से सम्पन्न है, वह नम्र है और गदहे पर अर्थात् गदही के बच्चे, वरन् लद्दू के बच्चे पर बैठा है।' यह तो परमेश्वर की ओर से मेरी प्रार्थना का उत्तर था। आत्मा ने मुझ पर प्रकट किया है कि मेरा विवाह होने वाला है।"

यह "आत्माई अर्थनिरूपण" *(pneumatic exegesis)* का एक उदाहरण था जो कि भाग्यपूर्ण डुबकी के लिए एक थोड़ा उत्तम शब्द था।

इसका सम्बद्ध बाइबल का किसी आत्मिक कुचक्र के द्वारा अर्थानुवाद करने से है। यह केवल जादू-टोना या अन्धविश्वास की सीमा पर ही नहीं खड़ा है, वह तो उसे भी लाँघ देता है। कालेज की मेरी इस प्रिय छात्रा ने पवित्रशास्त्र का अर्थानुवाद इस ढ़ंग से किया है कि यह परमेश्वर के पवित्र आत्मा के विरुद्ध वास्तव में एक अपमान है। बाइबल को एक जादूई जन्तर-मन्तर के रूप में मोड़ देना निश्चित् रूप से आत्मा द्वारा बाइबल को प्रेरित किये जाने के उसके कार्य के उद्देश्य के अनुरूप नहीं है।

आत्मा वचन का उपयोग कैसे करता है

इसी प्रकार की एक घटना अगस्टीन *(Augustine)* के जीवन में भी घटित हुई थी, जो कि पहली सहस्राब्दी के एक महान ईश्वरविज्ञानी थे। उनके हृदय-परिवर्तन से पूर्व अगस्टीन ने एक नियन्त्रणहीन, निरन्कुश और अनैतिक जीवनशैली जीने की ख्याति अर्जित की थी। उनकी ईश्वरभक्त माँ मोनिका, सत्यनिष्ठा के साथ लम्बे समय तक प्रार्थना करती रहीं कि उनका पुत्र ख्रीष्ट के निकट आ जाए। जैसा कि अगस्टीन अपने *अंगीकार (Confessions)* नामक संस्करण में ब्योरा देते हैं, एक दिन वह एक वाटिका में ध्यान कर रहे थे, तथा अपने काल के विभिन्न दार्शिनक प्राणालियों के विषय में उनके भ्रम के मध्य में सत्य को समझने का प्रयत्न कर रहे थे। कुछ बच्चे निकट ही खेल रहे थे और अगस्टीन उनको एक विचित्र वाक्य को दोहराते हुए सुन रहे थे: *"टोले लेगे, टोले लेगे-Tolle lege, tolle lege"* जिसका अर्थ है, "उसको उठा और पढ़, उसको उठा और पढ़।" अगस्टीन ने मसीही पवित्रशास्त्र की एक प्रति उठाई और वहाँ पढ़ना आरम्भ किया जहाँ वह पन्ने खुल गये। वे पन्ने

रोमियों की पुस्तक में खुले, जहाँ पौलुस कहता है: "हम सीधी चाल चलें जैसे दिन में, न कि रंगरेलियों, पियक्कड़पन, सम्भोग, कामुकता, झगड़े और ईर्ष्या में। वरन् प्रभु यीशु ख्रीष्ट को धारण कर लो और शारीरिक वासनाओं की तृप्ति में मन न लगाओ" (रोमियों 13:13–14)। जब अगस्टीन की आँखें उस स्थल पर पड़ीं, तो वे ग्लानी से ग्रसित हुए और परमेश्वर की बातों के प्रति जागृत हुए। और उसी क्षण, पवित्र आत्मा के द्वारा उनका नया जन्म हुआ।

अगस्टीन के अनुभव में और महाविद्यालय की मेरी छात्रा के अनुभव में भिन्नता क्या है? अगस्टीन ने परमेश्वर की इच्छा को एक जादूई प्रकिया के द्वारा जानने का प्रयत्न नहीं किया। उन्होंने तो केवल यूँ ही पवित्रशास्त्र को उठाया और एक विशेष स्थान पर पढ़ने के लिए पहुँच गए। उससे बढ़कर परमेश्वर ने अगस्टीन को वह स्थल इसलिए नहीं दिखाया कि वे उसमें कोई ऐसा अर्थ निकालें जैसा कि पवित्र आत्मा का अभिप्राय नहीं था जिसे उसने पौलुस को लिखने के लिए प्रेरित किया था। इसके विपरीत, आत्मा ने अगस्टीन को यह समझने के लिए सक्षम किया कि उस स्थल का वास्तविक अर्थ क्या है? इस प्रकिया में कोई जादू-टोना नहीं था।

मैं 1957 की एक शाम को महाविद्यालय के छात्रावास में एक चर्चा के द्वारा ख्रीष्ट की ओर फिरा था। एक साथी छात्र जो कि मसीही था मुझसे परमेश्वर की बातों के विषय में बात कर रहा था और बाइबल में से प्रत्येक प्रकार की बातों के विषय में उद्धरण दे रहा था। उसमें से अधिकाँश बातें मेरे सिर के ऊपर से निकल गयीं और मुझे स्मरण नहीं है कि उसने क्या कहा था। परन्तु उसने परमेश्वर की बुद्धि के विषय में बात करना आरम्भ किया

और जब उसने आरम्भ किया, तो उसने बाइबल में सभोपदेशक की पुस्तक को खोला और कुछ पदों को पढ़ा, जिसमें यह भी सम्मिलित था: "और वृक्ष चाहे दक्षिण-ओर गिरे चाहे उत्तर-ओर, वह जहाँ गिरता है वहीं पड़ा रहता है" (11:3ख)। और जैसे मैंने इन शब्दों को सुना तो यकायक ही मैं अपने विषय में यह सोच कर अभिभूत हो गया कि मैं जंगल में एक पेड़ की नाईं निष्क्रिय, उदासीन तथा सड़ा हुआ गिरा पड़ा हुआ था। मैंने देखा कि मैं तो उसी आत्मिक स्थिति में था; मैं एक गिरा हुआ पेड़ था, और मैं वहाँ पर तब तक पड़ा रहता जब तक कि परमेश्वर कुछ नहीं करता। यह उस खण्ड का अनुपयुक्त लागुकरण नहीं था। मेरा विश्वास है कि परमेश्वर पवित्र आत्मा ने मुझको बचाने वाले विश्वास के प्रति जागृत करने के लिए उस खण्ड का उपयोग किया।

यह ऐसे उदाहरण हैं जिन्हें हम ईश्वरीय प्रदीपन *(illumination)* कहते हैं, जो कि पवित्र आत्मा का एक और महत्वपूर्ण कार्य है। हमें आत्मा के प्रदीपन के कार्य को उसके प्रकाशन *(revelation)* के अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य से पृथक देखना चाहिए। पवित्र आत्मा ने बाइबलीय प्रकाशन को प्रेरित किया, परमेश्वर का वह सत्य जो कि बाइबल में हमारे लिए प्रकट और अनावरित किया गया है। यह वह जानकारी है जो अन्ततः हमारे पास स्वयं परमेश्वर के मस्तिष्क से आती है। इसके विपरीत प्रदीपन कोई नई जानकारी नहीं लाता है। यह पवित्रशास्त्र में आत्मा द्वारा पहले से ही प्रदान किये गये जानकारी पर निर्भर होता है। जब आत्मा ने उस बचकाने वाले जाप का उपयोग अगस्टीन को रोमियों के खण्ड को पढ़ने हेतु उकसाने के लिए किया, तो उसने उस क्षण अगस्टीन के लिए कोई नई जानकारी नहीं दी। उसकी अपेक्षा उसने अगस्टीन को पवित्रशास्त्र के एक स्थल को पढ़ने के लिए निर्देशित किया जो कि वहाँ पर

अन्य सभी के पढ़ने के लिए था। यद्यपि सहस्त्रों-सहस्त्र लोगों ने उस खण्ड को पढ़ा होगा किन्तु उन्होंने अपने आप को उसमें नहीं देखा होगा। वे उसके द्वारा कायल नहीं किये गये परन्तु उससे अप्रभावित रहे क्योंकि वह उसके महत्व और सामर्थ्य के प्रति अन्धे बने रहे। किन्तु अगस्टीन ने आत्मा के प्रदीपन को अनुभव किया। दूसरे शब्दों में, आत्मा ने अगस्टीन में उसकी सहायता करने के लिए कार्य किया जिससे कि वह परमेश्वर के सत्य को उन शब्दों में समझ सके जिन्हें वह पढ़ रहा था।

"परमेश्वर की गहराईयों" को खोजना

मसीही लोगों को प्रदीपन प्राप्त लोगों में गिना जाना चाहिए, वे जो ज्योतिर्मय हो चुके हैं—हिमालय से आए किसी गुरु के द्वारा नहीं परन्तु पवित्र आत्मा के द्वारा जो परमेश्वर के वचन की ज्योति को उपयोग करता है। हम इस विचार को कुरिन्थियों को प्रेरित पौलुस की प्रथम पत्री में स्पष्ट रीति से देखते हैं, जहाँ हम पढ़ते हैं:

> फिर भी हम समझदारों में ज्ञान की बातें सुनाते हैं, परन्तु यह ज्ञान न तो इस युग का और न ही इसके शासकों का है जो मिटने वाले हैं। परन्तु हम परमेश्वर के उस ज्ञान के रहस्य का वर्णन करते हैं अर्थात् उस गुप्त ज्ञान का जिसे परमेश्वर ने सनातन से हमारी महिमा के लिए ठहराया, जिस ज्ञान को इस युग के शासकों में से किसी ने न समझा: यदि वे समझ गए होते तो महिमा के प्रभु को क्रूस पर न चढ़ाते। पर जैसा लिखा है,

> "जिन बातों को आँख ने नहीं देखा और न कान ने सुना, और जो मनुष्य के हृदय में नहीं समाईं, उन्हीं को परमेश्वर ने अपने प्रेम करने वालों के लिए तैयार किया है।" परन्तु परमेश्वर ने उन्हें आत्मा द्वारा हम पर प्रकट किया, क्योंकि आत्मा सब बातों को यहाँ तक कि परमेश्वर की गूढ़ बातों को खोजता है। (2:6–10)

पौलुस का अर्थ क्या है जब वह कहता है कि "आत्मा सब बातों को यहाँ तक कि परमेश्वर की गूढ़ बातों को खोजता है?" जब हम *खोजता* शब्द का उपयोग करते हैं, तो हम साधारणतः किसी ऐसे कार्य का उल्लेख कर रहे होते हैं जिसमें हम कुछ पता लगा रहे होते हैं या फिर ढूँढ रहे होते हैं। यदि मैं ज्ञान की खोज में हूँ, ज्ञान को ढूँढ रहा हूँ, तो मैं कुछ ऐसा सीखना चाहता हूँ जो मुझे वर्तमान में ज्ञात नहीं है। तो इसलिए जब पौलुस कहता है कि आत्मा परमेश्वर की गूढ़ बातों को खोजता है, तो ऐसा प्रतीत हो रहा है कि वह यह आशय निकाल रहा है कि त्रिएकता का तृतीय व्यक्ति ऐसे ज्ञान को प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा है जिसकी उसके पास घटी है। परन्तु यदि हम यह निष्कर्ष निकालें कि कुछ बातें हैं जो कि पवित्र आत्मा नहीं जानता है और उसे सीखने की आवश्यकता है, तो त्रिएकता का हमारा सिद्धान्त नष्ट हो जाता है। आत्मा में इस प्रकार के ज्ञान की घटी उसके परमेश्वरत्व *(Godhead)* का सदस्य होने के कारण उसके ईश्वरत्व *(deity)* को नकारेगी। तो हमें इस प्रश्न को एक अन्य दिशा से देखना चाहिए तथा वह सब ग्रहण करना चाहिए जो कि पवित्रशास्त्र आत्मा के विषय में शिक्षा देता है—कि वह परमेश्वरत्व का भाग

है और इसलिए सर्वज्ञानी है। इसलिए वह परमेश्वर की गूढ़ बातों को अपना ज्ञान बढ़ाने के लिए नहीं खोजता है।

इसके विपरीत, पौलुस यहाँ पर हमको यह बता रहा है कि पवित्र आत्मा परमेश्वर की गहराईयों को हमारे लिए खोजता है। आत्मा एक खोजदीप *(searchlight)* के रूप में कार्य करता है और जब हम पवित्रशास्त्र पढ़ते हैं तो वह खण्ड पर खोजदीप को चमकाता है, तथा हमें उसके अर्थ को समझने की क्षमता प्रदान करता है। जब यह होता है तो हम परमेश्वर के सत्य को तीव्रता और स्पष्टता से देखते हैं। हम में से प्रत्येक जो मसीही हैं उन्होंने यह अनुभव अपने जीवन में कभी न कभी किया है। हम पवित्रशास्त्र पढ़ रहे होते हैं और यकायक कोई एक विशेष सत्य पृष्ठ में से उछलता हुआ प्रतीत होता है और हमारे प्राणों को भेदता है। यह पवित्र आत्मा द्वारा प्रदीपन *(illumination)* का कार्य है।

वर्ष 1734 में नार्थ हैम्पटन, मैसाचुसेट्स में एक सन्देश प्रचार किया गया था, जो कि मेरा मानना है कि वह अमरीकी भूमि पर अब तक प्रचार किये गए सन्देशों में से सर्वाधिक महत्वपूर्ण सन्देश था। जिस पुरुष ने उसका प्रचार किया था, जोनाथन एडवर्ड्स, वह एक अन्य सन्देश के लिए अधिक प्रसिद्ध हैं, "प्रकोपी परमेश्वर के हाथों में पापीगण-*Sinners in the Hands of an Angry God,*" जिसे उन्होंने 1741 में एनफील्ड, कनेक्टिकट में प्रचार किया था। अमरीकी साहित्य के अनेक पद्य संग्रहों में औपनिवेशिक *(Colonial)* न्यू इंग्लैण्ड के लेखनी के उदाहरण के रूप में "प्रकोपी परमेश्वर के हाथों में पापीगण" को सम्मिलित किया जाता है। परन्तु मेरा मानना है कि इससे पूर्व दिया गया सन्देश अत्यन्त महत्वपूर्ण था जिसको यह शीर्षक दिया गया था: "एक ईश्वरीय और अलौकिक ज्योति, जिसे तुरन्त परमेश्वर के आत्मा के

द्वारा प्राण को प्रदान किया गया, जिसको पवित्रशास्त्रीय और तार्किक सिद्धान्त द्वारा प्रमाणित किया गया है-*A Divine and Supernatural Light, Immediately Imparted to the Soul by the Spirit of God, Shown to Be Both Scriptural and Rational Doctrine।"* यह सन्देश अत्यन्त चिर परिचित नहीं है और न ही व्यापक रूप से प्रसारित हुआ है, परन्तु मेरा मानना है कि यदि कोई सन्देश एडवर्ड्स के अद्भुत बुद्धि को प्रदर्शित करता है तो वह यही है। इस सन्देश में एडवर्ड्स अलौकिक प्रदीपन के विषय में बोल रहे थे।

एडवर्ड्स इस आत्मिक ज्योति को यह कहने के द्वारा परिभाषित करते हैं:

> और उसका इस रीति से वर्णन किया जा सकता है: परमेश्वर के वचन में प्रकाशित की गई बातों की ईश्वरीय परमश्रेष्ठता की वास्तविक अनुभूति, तथा परिणामस्वरूप प्रकट होने वाले सत्य का दृढ़ मत और उनकी वास्तविकता। यह आत्मिक ज्योति प्राथमिक रीति से पहले वाली बात में पाई जाती है, *अर्थात्* परमेश्वर के वचन में प्रकट बातों की ईश्वरीय परमश्रेष्ठता की एक वास्तविक अनुभूति और बोध। इन बातों की सत्यता और वास्तविकता का आत्मिक और बचाने वाला दृढ़ मत, जो कि उनके ईश्वरीय परमश्रेष्ठता और महिमा के ऐसे दर्शन से उत्पन्न होता है; जिससे कि उनके सत्य का यह दृढ़ मत उनके ईश्वरीय महिमा के इस दर्शन का प्रभाव और स्वाभाविक परिणाम हो।*

* जोनाथन एडवर्ड्स, "A Divine and Supernatural Light, Immediately Imparted to the Soul by the Spirit of God, Shown to be Both Scriptural and Rational Doctrine," http://www.ccel.org/e/edwards/sermons/supernatural_light.html, accessed July 5, 2012.

एडवर्ड्स के अनुसार, आत्मा के प्रदीपन के कार्य का प्राथमिक प्रभाव हमारे भीतर परमेश्वर की बातों की ईश्वरीय परमश्रेष्ठता के उस बोध को जागृत करना है। हम इस बात के लिए तो सहमत हो सकते हैं कि ख्रीष्ट ईश्वरीय है और तौभी हम उस विचार की सुन्दरता को बोध न कर पाएँ। हमारे हृदयों और प्राणों में सम्भवतः अभी भी उसके लिए स्नेह न हो। आत्मा हम में परमेश्वर की बातों की परमश्रेष्ठता के प्रति एक संवेदनशीलता को जागृत करता है। परन्तु वह परमेश्वर के वचन के विरुद्ध कार्य नहीं करता है। आत्मा वचन में, वचन के साथ और वचन के द्वारा कार्य करता है। दूसरे शब्दों में, वह हमें परमेश्वर के प्रकाशन तक ले जाता है और उसको हमें इस रीति से दर्शाता है कि वह परमेश्वर के सत्य के विरुद्ध हमारे स्वाभाविक बैर या पक्षपात पर विजय पाता है और हमको उसकी रमणीयता को दर्शाता है। जिस रीति से यहेजकेल ने पुस्तक को उसके कटु शब्दों के साथ निगल लिया और उन्हें अपने मुख में अचानक मधु जैसा मीठा पाया (3:3), वैसे ही परमेश्वर के वचन उन सब के लिए मीठे बन जाते हैं जो उनको आत्मा की खोजदीप के प्रकाश में देखते हैं।

लेखक के विषय में

डॉ. आर.सी. स्प्रोल लिग्निएर मिनिस्ट्रीज़ के संस्थापक, सेंट एंड्रयूज़ चैपल, सैनफोर्ड, फ्लोरिडा के संस्थापक पास्टर, और रिफॉर्मेशन बाइबल कॉलेज के प्रथम अध्यक्ष, और *टेबलटॉक* पत्रिका के कार्यकारी सम्पादक थे। उनका रेडियो कार्यक्रम *रिन्यूइंग योर माइंड* अभी भी संसार भर के सैकड़ों रेडियो स्टेशनों पर प्रतिदिन प्रसारित किया जाता और ऑनलाइन भी सुना जा सकता है। वे एक सौ से अधिक पुस्तकों के लेखक थे, जिनमें द *होलीनेस ऑफ गॉड, चोज़ेन बाय गॉड* और *एवरीवन्ज़ अ थियोलोजियन* सम्मिलित हैं। उन्हें संसार भर में पवित्रशास्त्र की अचूकता की सुस्पष्ट रक्षा तथा परमेश्वर के लोगों के लिए उसके वचन पर दृढ़ विश्वास के साथ खड़े होने की आवश्यकता के लिए पहचाना गया था।

फॉर द ट्रूथ

फॉर द ट्रूथ एक प्रकाशन सेवा है जो भारत की कलीसिया के लिए विश्वासयोग्य बाइबलीय संसाधन छापने, प्रकाशित करने, और वितरित करने के लिए अस्तित्व में है। हमारी आशा है कि हम:

1. पुरानी और नई पुस्तकों का हिन्दी भाषा में अनुवाद करें, प्रकाशित करें, और वितरित करें।
2. स्थानीय लेखकों द्वारा लिखे गए संसाधनों को विकसित करें, प्रकाशित करें और वितरित करें।

अधिक जानकारी के लिए:

https://forthetruth.in
मोबाइल: +91 8604685533
यूट्यूब: forthetruth.in
ई-मेल: forthetruthindia@gmail.com
इंस्टाग्राम@forthetruthindia
facebook.com/forthetruthindia

मार्ग सत्य जीवन

मार्ग सत्य जीवन एक सेवा है जो कलीसिया की उन्नति के लिए हिन्दी में बाइबलीय तथा विश्वासयोग्य संसाधन (पुस्तक, सन्देश, लेख, वीडियो) उपलब्ध कराती है।

अधिक जानकारी के लिए:

https://margsatyajeevan.com
यूट्यूब: Marg Satya Jeevan
पॉडकास्ट: https://anchor.fm/marg-satya-jeevan
ई-मेल: enquirymsj@gmail.com
इंस्टाग्राम@margsatyajeevan
facebook.com/margsatyajeevan

लिग्निएर मिनिस्ट्रीज़ – हिन्दी

लिग्निएर मिनिस्ट्रीज़ की हिन्दी वेबसाइट इसलिए अस्तित्व में है जिससे कि जितने अधिक लोगों तक सम्भव हो सके उन तक परमेश्वर की पवित्रता को उसकी पूर्णता में उद्घोषित करें, उसकी शिक्षा दें और उसकी रक्षा करें।

अधिक जानकारी के लिए:

https://hi.ligonier.org
facebook.com/LigonierHI

क्या पवित्र आत्मा एक शक्ति है? कोई वैश्विक ऊर्जा? या सच में परमेश्वर?

पवित्र आत्मा का व्यक्ति और कार्य इन दिनों बहुत रुचि जगाता है—परन्तु बहुत अधिक भ्रम भी। बहुत से लोग पूरी रीति से यह नहीं समझते हैं कि आत्मा कौन है या वह हमारे जीवन में कैसे कार्य करता है। कुछ लोग तो यह भी दावा करते हैं कि आत्मा उनसे बाइबल से पृथक बात करता है।

इस पुस्तिका में डॉ. आर.सी. स्प्रोल वचन में जाकर भ्रम को हटा देते हैं। यह समझाने के पश्चात् कि पवित्र आत्मा कौन है, डॉ. स्प्रोल अविश्वासियों को नया जीवन देने से लेकर परमेश्वर के लोगों को पवित्र करने और उन्हें सशक्त बनाने तक, इस संसार में आत्मा के कार्य का संक्षिप्त विवरण देते हैं।

डॉ. आर.सी. स्प्रोल द्वारा लिखी गई यह अति महत्वपूर्ण प्रश्न पुस्तिका श्रृंखला, मसीहियों और विचारशील जिज्ञासुओं द्वारा प्रायः पूछे जाने वाले महत्वपूर्ण प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर प्रस्तुत करती है।

डॉ. आर.सी. स्प्रोल लिग्निएर मिनिस्ट्रीज़ के संस्थापक थे, सेंट एंड्रयूज़ चैपल, सैनफोर्ड फ्लोरिडा के संस्थापक पास्टर, और रिफॉर्मेशन बाइबल कॉलेज के प्रथम अध्यक्ष थे। वे सौ से अधिक पुस्तकों के लेखक थे, जिनमें द *होलीनेस ऑफ गॉड* भी सम्मिलित है।

लिग्निएर लाइब्रेरी

forthetruth.in

ISBN: 978-81-960303-8-4

9 788196 030384 >